डिस्टैंस ऐजुकेशन विभाग
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

कक्षा : बी.ए. भाग-1 *सैमेस्टर-2*
पत्र : हिन्दी साहित्य *एकांश संख्या : 1*
माध्यम : हिन्दी

पाठ नं.

हिन्दी साहित्य का इतिहास

1.1 भक्तिकालीन परिस्थितियाँ प्रवृत्तियाँ और हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल : स्वर्णयुग

1.2 कबीर, जायसी के काव्य की विशेषताएँ

1.3 सूरदास, तुलसीदास के काव्य की विशेषताएँ

1.4 शुद्ध-अशुद्ध, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, पर्यायवाची शब्द, विपरीतार्थक शब्द, अनेकार्थक शब्द

Department website : www.pbidde.org

पाठ संख्या : 1.1 (खण्ड-क) लेखिका : डॉ॰ एस॰ के॰ खुमार

भक्तिकालीन परिस्थितियाँ प्रवृत्तियाँ और

हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल : स्वर्णयुग

इकाई की रूपरेखा :

1.1.0 उद्देश्य
1.1.1 प्रस्तावना
1.1.2 हिन्दी साहित्य भक्तिकाल
  1.1.2.1 भक्तिकाल की परिस्थितियां
  1.1.2.2 भक्ति काल की प्रवृत्तियाँ विशेषताएं
1.1.3 सारांश
1.1.4 शब्दावली
1.1.5 अभ्यास के लिए प्रश्न।

1.1.0 उद्देश्य :

सम्वत् 1400 से 1700 का समय हिन्दी साहित्य में भक्तिकाल के नाम से प्रसिद्ध है। इस युग में भक्ति की व्यापक धारा देश में प्रवाहित हो रही थी, जिसमें हिंदू और मुसलमान समान रूप से डुबकियां लगा रहे थे। इस काल को सभी विद्वानों ने भक्तिकाल ही माना है, क्योंकि इस काल में भक्ति की प्रधानता रही है। इस काल की रचनाओं में निर्गुण और सगुण दोनों प्रकार की भक्तियों का चरमोत्कर्ष दिखाई पड़ता है। प्रस्तुत अध्याय को पढ़ने के पश्चात् आप समझ सकेंगे कि–

- भक्तिकाल की राजनैतिक, सामाजिक तथा साहित्यिक परिस्थितियों से परिचित हो सकेंगे,
- भक्तिधारा के आरम्भ होने के कारणों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे,
- भक्ति की निर्गुण–सगुण शाखाओं तथा उनकी उपशाखाओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे,
- भक्तिकाल के साहित्य की विशेषताओं का विवेचन कर सकेंगे और;
- निर्गुण भक्ति काव्यधारा की विशेषताएं तथा सगुण भक्तिधारा की विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे।

1.1.1 प्रस्तावना :

हिन्दी साहित्य के संदर्भ में भक्तिकाल से अभिप्राय उस काल से है जिसमें मुख्यतः भागवत धर्म के प्रचार–प्रसार के परिणामस्वरूप भक्ति आंदोलन का सूत्रपात एवं प्रवर्तन हुआ। जहां तक भक्ति के उदय का प्रश्न है, इतना तो निर्विवाद मान्य है कि इसका आरम्भ दक्षिण में हुआ, परन्तु उत्तर भारत में लाने का श्रेय स्वामी रामानंद की अपेक्षा इनके गुरु को दिया जाता है। अन्य युगों की भांति भक्तिकाल में भी भक्तिकाव्य के साथ–साथ अन्य प्रकार की रचनाएं होती रहीं, फिर भी प्रधानता भक्तिपरक रचनाओं की ही रही। इसलिए भक्ति की प्रधानता के कारण चौंदहवी शती के मध्य से सत्रहवीं शती के बीच वेदों, उपनिषदों, गीता और पुराणों से मिलते हैं, किंतु भक्ति की एक आंदोलन के रूप में सारे देश में व्याप्ति इसी युग में संभव हुई।

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी हिन्दी साहित्य के संदर्भ में भक्तिकाल से तात्पर्य उस काल से मानते है जिसमें मुख्यतः भागवत धर्म के प्रचार और प्रसार के परिणामस्वरूप भक्ति आंदोलन का सूत्रपात हुआ था। उसकी लोकोन्मुखी प्रवृत्ति के कारण धीरे–धीरे लोक प्रचलित भाषाएं भक्ति भावना की अभिव्यक्ति का माध्यम बनती गई है और कालान्तर में भक्ति विषयक विपुल साहित्य की बाढ़ सी आ गई। हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल सबसे सशक्त काल माना जाता है। भक्ति साहित्य भाषा साहित्यिकता एवं सामाजिकता के स्तर पर विशेष महत्व रखता है। इसीलिए आचार्य शुक्ल ने साहित्य को जनता की चितवृतियों का प्रतिबिंब मानते हुए भक्ति साहित्य को ध्यान में रखते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने भक्ति आंदोलन को जातीय आंदोलन का सांस्कृतिक प्रतिबिंब माना और आधुनिकता का समारंभ इसी से प्रतिष्ठित करना चाहता है। भक्ति का प्रादुर्भाव कैसे हुआ इस संबंध में विद्वानों में मतभेद है। डॉ. ग्रियर्सन इसे ईसायइयत की देन मानते हैं। आचार्य शुक्ल के मत में भारत में भक्ति का उद्‌गम मुसलमानों की विजय की प्रतिक्रिया में हुआ। इन दोनों के मत निराधार हैं। क्योंकि ईसाईयों का आगमन यहां दूसरी या तीसरी शताब्दी में हुआ था। जबकि भक्ति के बीज यहां उससे पहले से विद्यमान थे। दूसरा यदि भक्ति का उद्‌गम मुसलमानों की विजय की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ तो इसका आरम्भ उत्तर भारत से होना चाहिए। इस प्रकार स्पष्ट है कि भक्ति की धारा आकस्मिक रूप से प्रकट नहीं हुई। उसका क्रमशः विकास होता गया। यह तो भारतीय विचार–परम्परा का स्वाभाविक विकास है। अनुकूल परिस्थितियों प्राप्त कर वह अधिकाधिक रूप में फैल गई।

1.1.2 हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल, विशेषताएं :

हिन्दी साहित्य का काल विभाजन करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने पूर्व मध्यकाल का समय संवत् 1375–1700 ई. तक निर्धारित किया है। डॉ. ग्रियर्सन ने भक्ति आंदोलन को पन्द्रहवीं शती के धार्मिक पुनर्जागरण नाम से अभिहित करते हुए भक्ति आंदोलन के महत्त्व का प्रतिपादन इन शब्दों में किया है– 'हम अपने को एक ऐसे आर्थिक, आंदोलन के सामने पाते हैं जो उन सब आंदोलनों से कहीं अधिक विशाल है, जिन्हें भारतवर्ष ने कभी देखा है, यहां तक बौद्ध धर्म के आंदोलन से भी अधिक विशाल है, क्योंकि इसका प्रभाव आज भी वर्तमान है। इस युग में धर्म ज्ञान का नहीं, बल्कि भावावेश का विषय हो गया था।'

हिन्दी साहित्य के 15वीं शताब्दी विक्रमी से 17वीं शताब्दी विक्रमी तक के काल को भक्ति–काल के नाम से पुकारा जाता है। इस काल को कई इतिहास–लेखक पूर्वमध्यकाल और धार्मिक काल भी कहते हैं। परंतु 'भक्तिकाल' नाम ही सबसे लोकप्रिय है। इस काल में भक्तिकाल का साहित्य ही अधिक लिखा गया। सारा वातावरण ही भक्तिमय बना रहा। इसकी विभिन्न भक्तिशाखाओं की चर्चा करने से पहले उन परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है जिनके कारण देश भर में भक्ति की भावना सर्वत्र प्रभावशाली बनी रही। भक्तिकाल की परिस्थितियों में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा साहित्यिक गतिविधियां निरन्तर चलती रहीं। यहां उनका संक्षिप्त विवेचन किया जा रहा है।

1.1.2.1 भक्तिकाल की परिस्थितियां :

राजनीतिक परिस्थितियां :

भारतीय राजाओं के परस्पर कलह को देखकर विदेशी शक्तिशाली शासकों ने आक्रमण आरम्भ कर दिए। महमूद गजनवी और मुहम्मद गौरी के आक्रमण इतने भयंकर हुए कि भारतीय राजपूत राजाओं से उनका घोर संघर्ष हुआ और मुहम्मद गौरी पृथ्वीराज चौहान को कैद कर अपने

साथ ले गया। वहीं उसकी मृत्यु भी हुई। इन दो आक्रमणों के साथ सिंध प्रदेश के रास्ते से भी भारत पर आक्रमण हुए। मुहम्मद बिन कासिम का आक्रमण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनके साथ संघर्ष में सिंधु का प्रतापी वीर राजा दाहर मारा गया था। इसके अतिरिक्त गुलाम वंश, तुगलक वंश, खिलजी वंश ने भी राजपूत राजाओं को छिन्न–भिन्न कर अपना राज्य जमाया। सिकन्दर लोधी के आक्रमणों से भारतीय जनजीवन पद दलित हुआ। तैमूरलंग के आक्रमणों से भी भारतीय जीवन में हलचल मच गई थी। राजाओं और मुसलमान शासकों में निरंतर युद्ध चलता रहा। बाबर, हुमांयू और अकबर के काल तक निरंतर संघर्ष होता ही रहा, परन्तु मुसलमान शासक अब अपना प्रभुत्व स्थापित कराने में सफल हो गए थे। राजाओं महाराजाओं से उनकी सन्धियां हो गई थीं। कहीं–कहीं राजपूत व अन्य भारतीय शासक अपना शासन बचाए हुए थे तब भी उन्होंने इस्लामी शासकों से मित्रता का हाथ बढ़ाकर शांति स्थापित कर ली, राजस्थान के कई राजा मुगल शासकों के दरबारों में उच्च पदों पर आसीन हो गए थे। इसलिए राजनीतिक हलचल शांति की ओर अग्रसर थी तथा युद्ध बंद हो गए थे। कबीर ने सिकन्दर लोदी का हलचल का युद्ध देखा था। जायसी ने शेरशाह सूरी के युद्धों में काव्य लिखा। परंतु उसके खानदान के अलाउद्दीन खिलजी का ऐतिहासिक और कल्पनात्मक वर्णन किया। इसके अनन्तर मुगल वंश के बादशाहों में बाबर ने गुरु नानक देव को बुलाया और चक्की पीसने तक का कष्ट दिया। अकबर ने सूरदास एवं तुलसीदास को दरबार में बुलाया परन्तु दोनों ने साहित्य के मार्ग को चुना और राजप्रशासन के आश्रय में रहना स्वीकार न किया। मीराबाई ने भी राजपरिवार को असहनीय कष्टों के कारण छोड़ दिया। 'जहांगीर जसचन्द्रिका' नाम से आचार्य केशवदास ने जहांगीर की प्रंशसा में रचना लिखी। यह तथ्य राजनीति और प्रशासन के साहित्यकारों से सम्बन्ध और आश्रय को प्रकट करते हैं। परंतु जिन संत कवियों ने राजाश्रय को नहीं स्वीकारा, उन्हें कष्ट देने की परिस्थिति को उजागर करते हैं इस काल में दक्षिण और पूर्वी क्षेत्रों में कुछ स्वतंत्र हिन्दु राज्य अवश्य थे, परंतु उनसे भी मुगल शासकों का संघर्ष चलता रहा था। बाबर ने आक्रमणों में जीवन व्यतीत किया, हुमांयू का शासन थोड़े वर्षों तक रहा और काल में भी वह संघर्षों में उलझा रहा। अकबर ने अपनी सत्ता स्थापित कर ली थी। दिल्ली और आगरा में मुगलों के प्रशासन केन्द्र स्थापित थे। परंतु उत्तर पश्चिमी भारत में पठान और अफगान निरंतर आक्रमण करते रहते थे। देश भर में राजनीतिक और सैनिक संघर्ष की गतिविधियां होती रहती थी।

राजनीतिक हलचल के कारण शासकों और जनता के सम्बन्धों में तनाव बना रहता था। अन्याय और अत्याचार भी शासक वर्ग द्वारा होता था। जिसे राजनीतिक जागृति न होने के कारण जनता सहन करती थी। बाहरी रूप से भारत के देश थे परन्तु भीतरी रूप से अलग–अलग राज्य बंटे हुए थे। जिनमें आपसी शत्रुता के दाव पेच चलते रहते थे। इन सब हलचलों से साहित्यकार भी प्रभावित थे। परंतु वह राजश्रय के प्रति आकृष्ट नहीं थे। रहीम और केशवदास के अतिरिक्त भक्तिकाल के कवि राज्याश्रय में रहने की अपेक्षा जनता जनार्दन के जीवन का सुधार करने के लिए कटिबद्ध थे। कबीर, सूरदास, तुलसीदास जैसे महान् कवियों ने इसी काल में भारतीय संस्कृति और सभ्यता का संरक्षण अपने काव्य में किया।

सामाजिक परिस्थितियां :

भक्तिकाल की सामाजिक परिस्थितियों में आदिकालीन स्थिति में अंतर अवश्य आ गया था। शासकों का रहन–सहन और आचार–विचार सामान्य जनता से सर्वथा भिन्न था। दोनों में शासक और शासित का सम्बन्ध स्थापित हो गया था। पीरों–पैगंबरों की दरगाहों की मान्यता समाज में बढ़

गई थी। समाधियों की भी पूजा होने लगी थी। अजमेर के सूफी संत की दरगाह पर हिंदू मुसलमान जाने लगे थे। संतों और भक्तों का समाज में आदर बढ़ गया था। समाज के सभी वर्ग निर्गुण अथवा सगुण भक्तिधारा में बहने लगे। समाज में पीरों, गुरुओं, संतों महंतों के दरगाह, मठ, मंदिर एवं पूजास्थान बन गए थे। कई नए सामाजिक सुधार के आंदोलन भी चल रहे थे। हिंदुओं में राजनीतिक दृष्टि से अपने आपको असुरक्षित समझने के कारण बाल–विवाह की प्रथा जोरों से प्रचलित हो गई थी। सती प्रथा का प्रचलन भी यथा पूर्व था। एक ओर संत कवि जाति का विरोध कर रहे थे तो दूसरी ओर देश में जातिपाति के कारण भेदभाव भी बल पकड़ता जा रहा था। स्त्री जाति पर दोहरा आक्रमण हो रहा था।

एक ओर संत कवि नारी निंदा करके भक्ति का प्रचार करते थे, दूसरी ओर शासक नारी को विलास का साधन मात्र समझते थे। इसलिए समाज में विचित्र विरोधाभास की स्थिति थी। कविवर तुलसी जैसे कवि वर्णाश्रम–व्यवस्था की स्थापना पर बल दे रहे थे। गहराई से अध्ययन करने पर पता चलता है कि शक्तिशाली सामाजिक जीवन परक शासक वर्ग की अपेक्षा संतों एवं भक्तों का प्रभाव अधिक था। भक्तिकाल समाज में भक्ति, धार्मिक विश्वास वर्ग एवं श्रद्धा का भाव प्रधान था।

धार्मिक दृष्टि से भक्तिकाल विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। क्योंकि इस काल का साहित्य ही उपासना और भक्ति की विविध पद्धतियों से प्रभावित है। बौद्धों के वज्रयान, हीनयान आदि मार्गों पर सिद्धों का प्रभाव भारत के पूर्वी क्षेत्रों में विद्यमान था। उत्तरी और पश्चिमी भारत में सगुण भक्ति की धारा बह रही थी।

कबीर के निर्गुणवाद ने वाराणसी क्षेत्र को प्रभावित किया और अपनी लंबी यात्राओं से अन्य क्षेत्र में प्रभाव डालने का प्रयत्न किया, परंतु निर्गुण भक्तिधारा पश्चिमी क्षेत्रों में दृष्टिगत नहीं होती। मंझन एवं जायसी का प्रेममार्ग इन क्षेत्रों में खूब रंग लाया परंतु भक्तिकाल में वहीं तक सीमित रहा और रीतिकाल में उत्तर पश्चिमी भारत में भी काव्य के कारण प्रेममार्गीय उपासना पद्धति का प्रभाव बढ़ा। महाकवि तुलसीदास ने प्रेममार्गी कवियों की टक्कर में रामकाव्य लिखा। निर्गुण और सगुण को एक करके अपनी भक्ति को प्रकट किया तो तुलसीदास का प्रभाव पूरे भारत में फैल गया। सूरदास, नंददास, छीतस्वामी आदि ब्रज क्षेत्र के कवियों ने श्री कृष्ण चरित गान किया तो उनका प्रभाव उस क्षेत्र में रहा। मीराबाई ने भगवत् धर्म का प्रभाव गुजरात क्षेत्र तक फैला दिया। इसलिए धार्मिक भावना देशभर में सुदृढ़ थी और संम्भवतः जीवन के लिए एकमात्र आश्रय बनी हुई थी। श्री कृष्ण और श्री राम के अतिरिक्त हनुमान की भक्ति के लिए अनेक मंदिरों की स्थापना की गई थी। मंदिर–मस्जिद साथ–साथ बनते जा रहे थे। अनेक ग्राम देवताओं की पूजा होने लगी थी। क्षेत्र विशेष के संतों पीरों के स्थान भी धार्मिक दृष्टि से श्रद्धा के केन्द्र बन गए। शैव और वैष्णव मतों के मानने वाले के साथ जैन मत के 'स्थानक' भी बनने लगे जहां साधू ठहरते और लोगों को उपदेश देते थे।

शंकराचार्य के अद्वैतवाद का संदेश दक्षिण में उत्तर भारत में आ पहुंचा। रामानुज आदि आचार्यों की परम्परा में वल्लभाचार्य के व्याख्यानाओं का कृष्ण भक्ति के क्षेत्र में अधिक प्रभाव पड़ा। अद्वैतवाद और द्वैतवाद और शुद्धाद्वैतवाद और विशिष्टता द्वैतवाद नाम से निराकार और साकार उपासना के क्षेत्र में व्याख्याएं हुई। इनका प्रभाव पढ़े लिखे प्रबुद्ध लोगों पर पड़ा और सामान्य जनता केवल श्रीकृष्ण को भगवान मानकर उपासना में ही मानसिक संतोष प्राप्त करने लगी। राम भक्ति के क्षेत्र में भी वादों की यही स्थिति बनी रही। कृष्ण लीलाओं के स्वांग बनाकर प्रदर्शन आरंभ हो गया जिससे सामान्य जनता धर्म के प्रति श्रद्धा से आकृष्ट होने लगी। धार्मिक

दृष्टि से हिन्दु लोग अधिकतर मूर्तिपूजक कथा–कीर्तन में विश्वास रखते थे। निराकारोपासक थे। वे मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं रखते थे। रोजा–नमाज में विश्वास रखते थे। परंतु निराकारोपासना के कारण दोनों जातियों के लोगों में धार्मिक सहनशीलता का भाव बढ़ गया और दोनों जातियों में धार्मिक भेदभाव कम होने लगा था।

साहित्यिक परिस्थितियां :

भक्तिकाल की राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक परिस्थितियों का समन्वित रूप तत्कालीन साहित्य में दृष्टिगत होता है। निर्गुण और सगुण भक्ति का साहित्य इन ही कारणों से रचा गया। कबीर, दादू, मलूकदास आदि निर्गुण संतों का साहित्य, आदिकालीन सिद्धों और नाथों के साधनापरक सिद्धांतों से प्रभावित हुआ। उसमें साम्प्रदायिक सद्भावना और राम–रहीम को एक मान कर चलने का आग्रह राजनीतिक एवं सामाजिक वातावरण के कारण आया। एकेश्वरवाद की भावना का प्रचार धार्मिक परिस्थितियों के कारण हुआ। सूफी साहित्य के कवियों की प्रेमधारणा नायिका को ईश्वर को ब्रह्मा का स्वरूप मानकर पुरुष रूपी साधक द्वारा सूफी सिद्धांतों से समन्वित हुई परंतु ज्योतिष एवं शकुन विश्वास तथा विवाहादि के रीति–रिवाज भारतीय सामाजिक जीवन के ही गृहित हुए। यही दशा योगियों की साधना पद्धति से मीराबाई के काव्य में दृष्टिगत होती है। कृष्ण भक्ति और रामभक्ति साहित्य में निर्गुण और सगुण को संसार के कष्टों को दूर करने वाला कहा गया है। 'अगुणहि सगुणहि नहिं कुछ भेदा' 'उभय हररि भव संभव खैदा' कि उक्ति इसी कारण कही गई है। निर्गुण परमगुण की विजय की चर्चा भी साहित्य में कृष्ण–भक्त कवियों ने आरम्भ की और सगुणवाद को जन–जीवन में श्रद्धापूर्वक ग्रहण करने योग्य सिद्ध कर लिया। साहित्यिक क्षेत्र में गीतिकाव्य का इतना सशक्त प्रचलन अन्य कालों में कम ही दृष्टिगत होता है। प्रबंध काव्य के अंतर्गत महाकाव्य और खंडकाव्य भी रचे गए। 'जानकी मंगल', 'पार्वती मंगल' जैसे काव्य लिखे गए। 'नायिका भेद' नामक कृति और संगीत का मार्मिक समन्वय इसी काल के साहित्य में हुआ। दोहा, चौपाई, कविता आदि छंदों में रचनात्मक काव्य लिखा गया है। अवधी और ब्रजभाषा का पलड़ा भारी हो गया। देश की चारों दिशाओं में ब्रजभाषा स्वीकार कर लिया गया। काव्य शास्त्रीय ग्रंथ भी लिखे गये जिनमें 'साहित्यलहरी', रंसमंजरी, हिततरंगिणी, कवि प्रिया एवम् रसिक प्रिया आदि प्रसिद्ध है। इन ही साहित्यिक गतिविधियों के कारण भक्तिकाल को साहित्य का स्वर्णयुग भी कहा जाता है। वास्तव में भक्तिकाल साहित्यिक रचनाओं के कारण सम्पूर्ण देश भक्ति के आंदोलन से आन्दोलित हो उठा था। सभी प्रदेशों एवं क्षेत्रों के साहित्यकार भक्ति भावना का साहित्य लिखने में गौरव का अनुभव करते थे।

1.2.2 भक्ति काल की प्रवृत्तियाँ विशेषताएं :

भक्तिकाल में निर्गुण और सगुण काव्यधारा के कवियों ने अपने–अपने काव्यों के सौंदर्य से हिन्दी काव्य को आकर्षत बनाया। दोनों धाराओं और उनकी उपधाराओं के कवियों के काव्य को कतिपय विशेषताएं ऐसी हैं जो सामान्य रूप में एक जैसी है। उनका उल्लेख करना आवश्यक है। अतः उस विशेषताओं को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है :

(1) ईश्वर की उपासना ही जीवन का लक्ष्य :

भक्तिकालीन युग और उस काव्यधाराओं के कवियों ने ईश्वर में अगाध विश्वास प्रकट किया है। निर्गुणवादियों ने निराकार ब्रह्म की उपासना की है। उसे घट–घट में व्यापत माना है और सगुण भक्तों ने अवतारधारी की उपासना पर बल दिया है। नास्तिकता का तो यहां प्रश्न ही नहीं था सभी वर्गों के कवि आराधक थे और दार्शनिक धरातल पर सगुण और निर्गुण में भी कोई भेद

नहीं था।

(2) एकेश्वरवाद :

ईश्वर के भिन्न–भिन्न रूप साकार मानते हुए सभी कवि एक ईश्वर के उपासक और विवेचक रहे। बहुधा उदाहरण दिया गया कि कांच के टुकड़ों में जैसे ही एक व्यक्ति अपना चेहरा देख लेता है ऐसे ही परमात्मा घट–घट में व्याप्त है। इस सत्य में कहीं भी मतभेद नहीं। कबीर ने कहा है – 'हम तो एक–एक करि जाना' तो तुलसीदास ने कहा है – 'ईश्वर एक अजन्मा'। इसलिए सभी कवि एक एकेश्वरवाद के प्रचारक थे।

(3) जीव और ब्रह्म का ऐक्य :

सभी भक्त कवियों ने ब्रह्म को सर्वव्यापक कहा है। जीव उसी ब्रह्म का एक अंश है। जीव तो उसे ब्रह्म से पृथक होकर इस संसार सागर में भटकता है। जीव की मुक्ति ब्रह्म की उपासना और उसमें लीन हो जाने पर ही होती है। स्त्री पुरुष के रूपक बांध कर भी कबीर–जायसी आदि कवियों ने जीव और ब्रह्म के संबंध को सामान्य लोगों को समझाया है।

(4) माया :

भक्त कवियों ने माया को महाठगिनी कहा है। उसे बंधन माना है। वह रमणी स्वरूप है। वह जीवात्मा को ब्रह्म से मिलने नहीं देती। सुत–दारा धनादि माया रूप है। इस माया के बंधन से मुक्त होने में ही कल्याण है। यह तमोगुण, रजोगुण और सतोगुण का फंदा लिए भ्रमण करती है। निर्गुण और सगुण कवि इस माया के विरोधी रहे हैं।

(5) गुरु महिमा :

इस काल के सभी कवियों ने गुरु की महिमा का गान किया है। कबीर ने गुरु की महिमा का बखान किया और गोबिन्द की अपेक्षा गुरु के चरणों पर बलिहारी जाने की बात कही। गुरु को कुम्हार के रूप में देखा और शिष्य को घड़े के रूप में बांधा। 'गुरु बिन गत नहीं होती' जैसी बातें भी निर्गुणवादियों ने कही। पीपा, दादू, मलूकदास आदि ने भी गुरु को ज्ञानदाता माना है। जायसी ने भी पद्मावत में तोते को गुरु के रूप में कहा है। वहां भी गुरु अज्ञान का भेदक है। कृष्णभक्त और रामभक्त कवियों में गुरु को उच्च स्थान प्राप्त है। बल्लभाचार्य और नरहरि महत्त्वपूर्ण है। मीरा भी गुरु कृपा की आकांक्षिणी बनी रही। इस प्रकार सभी कवि गुरु–महिमा के गायक थे।

(6) सत्संगति का प्रभाव :

निर्गुण और सगुण कवियों ने सत्संगति पर बल दिया है। कबीर तो साधुसंगति से ही उद्धार मानते हैं। सभी ज्ञानी भक्त साधु–संगति के गायक थे। गरीबदास ने सत्संगति को अमृत फल माना है। सूर और तुलसी ने भी संगति की महिमा का गान किया है। सत्संगति–मूल है, कल्याणकारी है। अनेक उदाहरण देकर सत्संगति की महिमा का वर्णन इस काल के कवियों ने किया है।

(7) सदाचार :

दोनों धाराओं के कवियों ने मानव के पवित्र आचरण पर बल दिया है। दुराचारी का पतन और नाश दिखाया गया है। पापाचरण को निंदित कर्म कहा है। ढोंगी, छली, दम्भी और आडम्बरी व्यक्तियों की निंदा की है। तुलसीदास ने 'मुंड मुंजय भए सन्यासी' कहकर ऐसे व्यक्ति को कबीर की भांति लताड़ा है। पवित्र आचरण के लिए इन कवियों ने नियम, व्रत, साधना और साधु संगति पर बल दिया है।

(8) नाम-जप महिमा :

प्रभु के नाम को जपने के लिए सभी कवि एक मत हैं। राम चाहे निराकार ब्रह्म का हो, चाहे राम–कृष्ण और रहीम का हो सब को एक मानकर इन कवियों ने जाप की महिमा पर बल दिया है। कबीर ने कितना सुंदर भाव व्यक्त किया है :

'अखियन सौ झांई परि, पंथ निहारि निहारि।
जिभ्या पे छाला परा, राम पुकारि पुकारि।।'

प्रेम मार्गी कवियों में जायसी ने कहा है :

परगत गुप्त सकल सह–पूरी रह सो नाव।

और तुलसी ने बड़े मार्मिक शब्दों में कहा है :

तुलसी अलखहि का लखे, राम नाम जपु नीच।

इसलिए सभी कवि नाम–जाप महिमा के प्रति सामान्य जनता में श्रद्धा जगाते रहे।

(9) जनसामान्य के कवि :

भक्तिकाल की चारों शाखाओं के सन्त कवि सामान्य घरों में जन्में थे और सामान्य जीवन में पलकर बड़े हुए थे। उन्होंने आपदाओं को झेला इसलिए वे राजाश्रय के कवि नहीं बने। वे जनता को ब्रह्म का रूप मानते रहे और उसके ही जीवन लाभ के लिए अपने साहित्य की रचना करते रहे।

(10) जनभाषा के कवित्त :

ब्रज और अवधी भाषाएं तब क्षेत्रीय अथवा जनपदीय भाषाएं थी। कबीर की भाषा में अनेक क्षेत्रों, प्रदेशों तथा अंचलों को भाषाओं के शब्द मिल गए थे। इसलिए उनकी भाषा पंचमेल खिचड़ी, जनभाषा अथवा सधुक्कड़ी कहलायी थी। सूफी काव्य की भाषा ब्रज अथवा अवधी दोनों ही रही और इस सबके समन्वय से ब्रज भाषा के रूप में सारे देश में स्वीकृत हो गई। केशवदास की ब्रजभाषा का स्वरूप ऐसा ही है। जिसमें बहु भाषाओं के शब्द मिल गये हैं। इसलिए भक्तिकाल के कवियों ने जनपदीय अथवा प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग करके हिन्दी साहित्य की एक भाषा ब्रजभाषा इसी युग में निश्चित कर दी थी। इसी निर्गुण और सगुण भक्ति के साहित्य की विशेषताओं के पश्चात् निर्गुण और सगुण भक्ति धाराओं की पृथक–पृथक विशेषताओं का उल्लेख भी किया है।

1.1.3 सारांश :

यद्यपि अन्य युगों की भांति भक्तिकाल में भी भक्तिकाव्य के साथ–साथ अन्य प्रकार की रचनाएं होती रही तथा प्रधानता भक्ति रचनाओं की ही रही। इसलिए भक्ति की प्रधानता के कारण चौदहवीं शती के मध्य से लेकर सत्रहवीं शती के मध्य तक के काल को 'भक्तिकाल' कहना युक्तियुक्त हैं।

यवनों के निरंतर आक्रमणों से भारत में राजपूती वीरता का ह्रास हो चुका था। मुसलमान शासक के रूप में बस चुके थे। इधर यवनों के अत्याचार के कारण शक्तिहीन हिंदु जनता निराश्रित हो भगवान की भक्ति की ओर उन्मुख हो रही थी। दूसरी ओर यवन देश में शांति से राज्य करना चाहते थे। वे युद्धों से ऊब चुके थे। वे हिन्दुओं से संपर्क बढ़ाने के इच्छुक थे। हिन्दु जनता भी यह चाहती थी कि उनका धर्म ऐसे रूप में आए कि यवन लोग उसका खंडन न कर सके। इतना ही नहीं, यदि संभव हो तो विरोध छोड़कर उनके साथ मिलें। इस प्रकार दोनों ओर मिलन प्रवृत्ति का उदय हो रहा था।

एक ओर बौद्ध–सिद्ध अपने वामाचार से और नाथ योगी अपने हठयोग से समाज को चमत्कारों द्वारा अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे तो दूसरी ओर इस्लाम का उदय हो रहा था। कुछ बौद्ध–सिद्ध और नाथ योगी भ्रष्ट होकर गृहस्थ होने की इच्छा कर रहे थे, किंतु हिन्दू जाति के संकीर्ण घेरे में उनका प्रवेश मुश्किल था। ऐसे समय में ऐसे सामान्य भक्तिमार्ग की आवश्यकता प्रतीत हुई, जिसे हिंदु–मुसलमान, छूत–अछूत, ऊँच–नीच सभी अपना सकें यह भक्ति मार्ग आगे चलकर निर्गुण सन्तमत के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

इन परिस्थितियों में दक्षिण भारत में उठी भक्ति की लहर ने समस्त देश को आप्लावित कर दिया और इस काल में निर्मित नया साहित्य मनुष्य जीवन के एक निश्चित लक्ष्य और आदर्श को लेकर चला। 'यह लक्ष्य है भगवद्–भक्ति, आदर्श है शुद्ध साहित्यिक जीवन और साधन है भगवान् के निर्मल चरित्र की सरल लीलाओं का गुणगान।'

प्राचीन परम्परा के परिणामस्वरूप भक्ति–भावना दक्षिण भारत में चल रही थी। जब वह उत्तर भारत में आई तो उस पर मुसलमानों के बस जाने के परिणामस्वरूप एक ऐसे धर्म की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी जो दोनों वर्गों को समान रूप में ग्रहण हो सके। इसलिए मुसलमानों के एकेश्वरवाद और हिन्दुओं के अद्वैतवाद को मिला कर भक्ति के क्षेत्र में निर्गुण भक्तिधारा का आरम्भ हुआ। इसके अनुसार भगवान निर्गुण है, निराकार है, उनकी प्राप्ति के लिए आचरणों की आवश्यकता नहीं बल्कि अन्तःसाधनों की आवश्यकता है।

दूसरी ओर भारतीय परम्परा के अनुसार सगुण भक्ति धारा भी चलती रही। इसके अनुसार भगवान बड़े दयालु हैं और अपने भक्तों की रक्षा के लिए समय–समय पर अवतार धारण कर पृथ्वी पर आते हैं। उनके अवतारों में राम और कृष्ण प्रमुख हैं। इस प्रकार भक्ति की दो धाराएं हो गई– निर्गुण भक्तिधारा और सगुण भक्तिधारा। आगे चलकर ये दोनों धाराएं दो–दो उपशाखाओं में बंट गई। निर्गुण भक्तिधारा की दो उपशाखाएं हैं – ज्ञानमार्गी शाखा और प्रेममार्गी शाखा। सगुण भक्तिध ारा की उपशाखाएं हैं – कृष्ण भक्तिशाखा और राम भक्तिशाखा।

भक्तिकाल के अंतर्गत भक्ति की चार शाखाएं एक साथ प्रचलित रही और उन चारों के सिद्धांतों एवं उपासना में अंतर था, तथापि कुछ ऐसी सामान्य प्रवृत्तियां भी है जो भक्ति साहित्य की सभी शाखाओं में समान रूप से उपलब्ध हैं।

सभी भक्त कवियों ने भगवान के साथ कोई–कोई सम्बन्ध अवश्य स्थापित किया है। सगुण कवियों ने तो प्रभु को स्वामी, सखा, पति आदि रूपों में स्वीकार किया हैं। निर्गुण भक्तों ने भी उसे 'भरतार' आदि कहकर पुकारा है। कबीर, जायसी आदि निर्गुण भक्त कवियों ने तो गुरु को ईश्वर से भी ऊँचा स्थान दिया है। तुलसी सूर आदि सगुण भक्त कवि भी गुरु का महत्व स्वीकार करते हैं। सभी भक्त कवियों ने भक्ति भावना को प्रधानता दी है। भक्ति काव्य में इस बात पर जोर दिया गया है कि भक्त को अहंकार बिल्कुल त्याग देना चाहिए।

सभी भक्त कवि सादा और सरल त्यागमय जीवन में विश्वास करते थे वे विरक्त थे और मायामोह से रहित थे। इसलिए उन्होंने संसारिक बाह्य आडम्बरों को छोडकर सच्चे हृदय से भगवान की भक्ति करने पर जोर दिया।

1.1.4 शब्दावली :

शब्द		**अर्थ**
निराकार	–	जिसका आकार न हो
प्रवर्तक	–	किसी काम को आरम्भ करने वाला

परिपक्व	–	पूर्णतया कुशल
प्रबल	–	बलवान
मनःस्थिति	–	मन की स्थिति
विकृतियां	–	बुराइयां
परिष्कृत	–	शुद्ध किया हुआ

1.1.5 अभ्यास के लिए प्रश्न :

(1) भक्तिकाल की परिस्थितियों और पृष्ठभूमि का चित्रण करते हुए उसकी मुख्य प्रवृतियों का उल्लेख कीजिए।

(2) भक्तिकाल के विभिन्न मतों को बताते हुए प्रत्येक मत के किन्हीं दो रचनाकार तथा उनकी रचना का उल्लेख कीजिए।

(3) अष्टछाप के कवियों का नाम बताते हुए उसके प्रवर्तक का नाम बताइए।

(4) क्या सूफी काव्य परम्परा भारतीय है?

हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल : स्वर्णयुग

इकाई की रूपरेखा

1.1.6 उद्देश्य
1.1.7 प्रस्तावना
1.1.8 हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल 'स्वर्णयुग'
1.1.9 सारांश
1.1.10 शब्दावली
1.1.11 अभ्यास के लिए प्रश्न।

1.1.6 उद्देश्य :

हिन्दी साहित्य का काल विभाजन करते समय इतिहासकारों ने इसे चार भागों में विभाजित किया है। आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल तथा आधुनिक काल। भक्तिकाल को कतिपय विशेषताओं, स्थापनाओं, उपलब्धियों एवं काव्यगत विशेषताओं के फलस्वरूप हिन्दी साहित्य का 'स्वर्णयुग' कहा जाता है। प्रस्तुत पाठ को पढ़ने के पश्चात आप;

– इससे परिचित हो सकेंगे कि हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल को 'स्वर्णयुग' क्यों कहा जाता है?
– भक्तिकाल के प्रतिपाद्य विषय की व्याख्या कर सकेंगे;
– भक्तिकाल के प्रमुख कवियों तथा उनकी कृतियों से परिचित हो सकेंगे और
– भक्तिकाल के अन्य कवियों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

1.1.7 प्रस्तावना :

आराध्य के प्रति अनुरक्ति का नाम ही भक्ति है। इस अनुरक्ति में श्रद्धा, सम्मान और सेवा की भावनाएं स्वाभाविक रूप से निहित रहती है। आचार्य शुक्ल के अनुसार श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है। शांडिल्य ने कहा है कि भक्ति के बीज वेदों में विद्यमान हैं। उपनिषद में ज्ञान प्राप्ति के लिए आराध्य देव और गुरु में भक्ति की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

कोई भी आंदोलन समाज से निरपेक्ष नहीं हो सकता। भक्ति इस युग की मांग ही नहीं, लोक जागरण का आधार थी। यही कारण है कि भक्ति आंदोलन को आज सही ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझने पर बल दिया जाता है। वैसे तो सभी भक्त कवियों की दृष्टि सामाजिक–राजनैतिक सुधार के प्रति थी पर इनमें संत कवियों एवं तुलसीदास की दृष्टि अधिक सटीक रही। यही कारण है कि भक्ति–साहित्य सामंत विरोधी लोकजागरण का क्रांतिकारी साहित्य है। लोक संस्कृति इन कवियों का मूलाधार रही है।

भक्ति आंदोलन ने समाज में ईश्वर विश्वास और आस्था के माध्यम से आत्मविश्वास और निर्भयता का संचार किया, साथ ही ज्ञान, सत्कर्म, सत्संकल्प, सदाचार आदि मूल्यों की प्रतिष्ठा द्वारा सुदृढ़ सामाजिक संगठन की नींव डाली। युग के यथार्थ से टकराकर भारतीय मनीषी इस युग में चिंतन, भावना और कल्पना की ऊँचाईयों का स्पर्श कर सकी। भगवान् की महिमा की भावना से भक्तों ने आत्मगौरव या मानव महिमा का साक्षात्कार किया। भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का प्रौढ़ काल माना जाता है। जितना साहित्य इस काल में लिखा गया इसमें भक्ति की विविधता एवं व्यापकता मिलती है। कबीर, जायसी, गुरु नानक, रविदास, तुलसीदास एवं सूरदास इस सम्पूर्ण

काव्यधारा की गरिमा स्तम्भ कहे जा सकते हैं। इन कवियों की रचनाओं ने ही भक्तिकाल को 'स्वर्णयुग' की उपाधि प्रदान करवाई है। अर्थात् इन कवियों की रचनाओं और उनकी विशेषताओं के कारण ही भक्तिकाल को 'स्वर्णयुग' कहा जाता है। ब्रह्म को निर्गुण एवं सगुण रूपों से संस्थापित करने वाले भक्ति सम्प्रदायों का इस काल के कवियों के प्रतिपाद्य रहे हैं।

1.1.8 हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल 'स्वर्णयुग' :

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल संवत 1375 से संवत् 1700 तक माना जाता है। भारत के इतिहास में यह काल हिन्दू जाति के पराभव और असफलता का काल था। देश में मुसलमानों के शासन की प्रतिष्ठा हो जाने से हिन्दु जाति निराशा के गहरे समुद्र में डूब चुकी थी। अपने आत्माभिमान, पराक्रम और शौर्य के प्रदर्शन के लिए अब उसके हृदय में उत्सुकता नहीं थी। मुसलमान शासक अपने साम्राज्य के विस्तार के साथ–साथ अपने धर्म का प्रचार भी कर रहे थे। हिन्दुओं में अब युद्ध करने की शक्ति न थी। परस्पर लड़ने वाले हिन्दू राजपूत वीर अब स्वतंत्र राज्य की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। हिन्दु जनता के हृदय में विदेशी शासकों का आंतक छाया हुआ था। अब वह अपने धर्म की रक्षा करने में असमर्थ था।

ऐसी विषम परिस्थिति में हताशा हिन्दू जाति के समक्ष अपने विक्षुब्ध हृदय को शांति पहुंचाने के लिए दुष्टों का दमन करने वाले, धर्म के रक्षक और अपने भक्तों के सहायक भगवान् की शक्ति और करूणा की ओर ध्यान देने के अतिरिक्त कोई और चारा ही न था। अब उसने भगवान की भक्ति में लीन होकर अपने विक्षुब्ध हृदय को सहलाने की चेष्टा की।

भक्ति का जो स्त्रोत भारत में पहले से ही बहता आ रहा था, वह अब उत्तर भारत में भी प्रसार पाने लगा। भक्ति आंदोलन वैष्णव आचार्यों का अवलम्बन पा कर अब बड़ी तीव्रगति से सारे देश में फैलने लगा था। 14वीं शताब्दी में स्वामी रामानंद ने इस भक्ति को अधिक व्यापक और लोकप्रिय बनाने में सफलता प्राप्त की। उन्होंने विष्णु के अवतार स्वरूप राम भक्ति पर जोर दिया। भक्ति के क्षेत्र में जाति–पाति के भेदभाव मिटा कर उन्होंने भक्ति के प्रचार के लिए संस्कृत के स्थान पर जनता की भाषा हिन्दी को अपनाया और इस प्रकार समस्त उत्तर भारत में रामभक्ति को लोकप्रिय बना दिया।

भक्तिकाल की कतिपय विशेषताओं, उपलब्धियों एवं काव्यगत मान्यताओं के फलस्वरूप हिन्दी साहित्य को 'स्वर्णयुग' कहा जाता है। क्योंकि भाषा एवं काव्यगत प्रौढ़ता इस काल में प्रकाश में आ जाती है। काव्यरूपी विविधता एवं ब्रज तथा अवधी भाषा की काव्यात्मक गरिमा इस युग की महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ कही जा सकती हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि किसी साहित्य के इतिहास में किसी काल विशेष को 'स्वर्णकाल' अथवा 'स्वर्णयुग' क्यों कहा जाता है? या किन आधारों पर घोषित किया जाता है? साथ ही हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल को स्वर्णयुग कहने वाले विद्वानों के सामने कौन–कौन से कारण रहे हैं। इस संबंध में एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जब इतिहासकारों ने भक्तिकाल को 'स्वर्णयुग' नाम से संबोधित किया था, उस समय तक आधुनिक काल का विकास इस सीमा तक नहीं हो पाया था। इस काल की तुलना आदिकाल और रीतिकाल से समझी जानी चाहिए। अर्थात् आदिकाल और रीतिकाल की अपेक्षा भक्तिकाल को सबसे अच्छा क्यों कहा गया है?

भक्तिकाल : अनुभूति एवं अभिव्यक्ति का प्रौढ़ काल :

भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का प्रौढ़ काल माना जाता है। जितना साहित्य इस काल में लिखा गया। इसमें भक्ति की विविधता एवं व्यापकता मिलती है। अन्य कालों में इस प्रकार की व्यापकता का अभाव है। इस काल का सामान्य परिचय भी किसी एक अध्याय अथवा निबंध विशेष रूप में

प्रस्तुत कर पाना संभव नहीं है। कारण स्पष्ट है कि इस काल की सम्वत् 1375 से 1700 तक सीमा में अनेक काव्य धाराएं प्रचलित रही हैं। पहले सगुण काव्यधारा है। पुनः सगुण काव्यधारा भी संत तथा सूफी दो काव्य धाराओं में प्रवाहित हुई। इस प्रकार हर काव्यधारा की अपनी विशेषताएं एवं उपलब्धियां रही है। कबीर, जायसी, गुरु नानक, रविदास, तुलसीदास एवं सूरदास इस सम्पूर्ण काव्यधारा की गरिमा स्तम्भ कहे जा सकते है।

इन युग में कवियों एवं काव्यधाराओं का परवर्ती कवियों एवं काव्यधाराओं पर विशेष प्रभाव पड़ा है। इन काव्यधाराओं की कुछ समवर्ती परम्पराएं भी रही हैं। जैसे कृष्ण काव्यधारा के अष्टछाप के कवियों की धारा। इन कवियों में कबीर, जायसी, सूर तथा तुलसी का उल्लेख विशेष रूप से किया जाता है। इन कवियों की रचनाओं ने ही भक्तिकाल को 'स्वर्णयुग' की उपाधि प्रदान करवाई है। अर्थात् इन कवियों की रचनाओं और उनकी विशेषताओं के कारण ही भक्तिकाल को 'स्वर्णयुग' कहा जाता है। हमारी दृष्टि से 'स्वर्णयुग' उसी युग को कहा जाना चाहिए जिस काल के कवियों का परवर्ती काल के कवियों ने प्रभुत्व ग्रहण किया है। अनुभूति एवं अभिव्यक्ति के धरातल पर सूर तथा तुलसी का प्रभाव आज के कतिपय कवियों ने भी माना है।

इस काल के साहित्य की विशिष्टता सबसे अधिक तो इस काल के कवियों की काव्यमयी उक्तियों में समाहित है। सूर और तुलसी अपने–अपने क्षेत्र में इतने महान हैं कि इनके काव्य की मीमांसा भी विद्धानों ने नाना प्रकार से की है, उधर कबीर और जायसी भी अपने में महान है। फिर इन कवियों ने जो अभिव्यक्ति रससिक्त वाणी में की है सहृदय समाज का हृदय उसमें लीन हो जाता है। काव्य की विशिष्टता की परख रसमयता की दृष्टि से बहुत अधिक की जाती है। भक्तिकाल में कबीर, दादू, नानक, रैदास, सुन्दरदास, मलूकदास आदि के काव्य में यद्यपि ज्ञान और अनुभव की प्रधानता है फिर तो जहां कहीं संसार की असारता या मृत्यु की अनिवार्यता आदि का कथन करके दुनिया से विरक्ति का वर्णन किया गया है वहां शांत रस मिल जाता है। सूफी कवि जायसी का या उनके अनुयायी कुतुबन, मंझन आदि के काव्यों में श्रृंगार रस की प्रधानता है। इनके शृंगार के संयोग और वियोग के मर्म भरे कथन हिन्दी साहित्य में बेजोड़ हैं।

1.1.9 सारांश :

'भक्तिकाल' को हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग कहा जाता है। इस युग में अमर और शाश्वत साहित्य की रचना हुई थी। कबीर, जायसी, सूर, तुलसी जैसे रस सिद्ध कवियों और महात्माओं की दिव्य वाणी उनके अन्तःकरण से निकल कर देश के कोने–कोने में फैली थी। भाव, भाषा एवं शिल्प सभी दृष्टियों से हिन्दी साहित्य का यह उत्कर्ष काल माना जाता है। संत कवियों ने अपना संदेश बड़ी स्पष्टता तथा निर्भीकता से जनता के समक्ष प्रस्तुत किया। ऐसा साहित्य किसी विशेष देश या काल का नहीं अपितु सार्वभौम एवं सार्वकालिक होता है। भक्तिकाल के काव्य में भाव तथा कलापक्ष का उत्कृष्ट रूप मिलता है। इसी कारण इस काल को हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग कहा जाता है।

सख्य, दास्य, मधुर एवं वात्सल्य आदि भक्ति के विविध रूप इस काल के कवियों का प्रतिपाद्य रहे हैं। प्रत्येक कवि अपने आराध्य के प्रति नतमस्तक है तथा उसके प्रति अपने अन्तःकरण की भक्तिभावना की स्निग्ध निश्चल अभिव्यक्ति करता है। भक्तिकाल में चारों काव्य धाराओं द्वारा साहित्य का बहुमुखी विकास हुआ है। हिन्दी साहित्य में इस काल का विशेष महत्त्व स्वीकार किया जाता है। दार्शनिक पृष्ठभूमि, चिंतनपद्धति, साम्प्रदायिकता और कर्मकांड आदि अनेक धाराओं में विलक्षण साम्य दृष्टिगोचर होता है। जिसे हम भक्ति एवं प्रेम की महता के रूप में मानते हैं।

भक्तिकाल के मुख्य कवियों के अतिरिक्त कुछ अन्य कवि भी हुए हैं जिनमें रहीम, सेनापति तथा नरोत्तमदास आदि प्रसिद्ध हैं। सांसारिक अनुभव की दृष्टि से रहीम का व्यक्तित्व विलक्षण है। विषय–विविधता सेनापति की विलक्षणता रही है। नरोत्तमदास मूलतः मानवीय धरातल के भक्त कवि हैं। फुटकल कवियों के अंतर्गत आचार्य शुक्ल ने इनका उल्लेख किया है। इन कवियों की कुछ समानताएं हैं :– इन कवियों का अधिकांश परिचय अनुमान के आधार पर मिलता है। भक्ति को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में भी सभी कवि अपनाते प्रतीत होते हैं। इनकी अधिकांश रचनाओं में प्रमाणिकता पर प्रश्न चिन्ह लगाया जाता है। भक्ति को परम्परित रूप के साथ मानवीय धरातल पर मान्यता दी गई है। सभी कवि इस युग के तथा समाज के सजग कवि हैं। सभी का भक्तिकाल में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सभी कवियों के काव्य में विषय की विविधता मिलती है, काव्य रूप में विविधता, प्रबंध तथा मुक्तक दोनों में है। भाषा की परम्परा स्पष्ट है। अधिकांश कवि दरबारी रहे हैं। जो राजाश्रय में रहे और राजाओं की प्रंशसात्मक छंदों की रचना करते रहे।

1.1.10 शब्दावली :

शब्द		**अर्थ**
विक्षुब्ध	–	निर्भय, निडर
पराक्रम	–	शक्ति, बल, सामर्थ्य
शौर्य	–	बहादुरी, शूरता, वीरता
विलक्षण	–	अनोखी
प्रतिपाद्य	–	उद्देश्य
अभिलाषा	–	इच्छा

1.1.11 अभ्यास के लिए प्रश्न :

1. भक्तिकाल को हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग क्यों कहा जाता है?
2. भक्तिकाल की सामान्य प्रवृतियां लिखिए।
3. भक्तिकाल के प्रमुख कवियों के व्यक्तित्व तथा कृतित्व का उल्लेख कीजिए।
4. संत काव्य की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

पाठ संख्या : 1.2 **लेखिका : डॉ॰ एस॰ के॰ खुमार**

कबीर, जायसी के काव्य की विशेषताएँ

इकाई की रूपरेखा :

1.2.0 उद्देश्य
1.2.1 प्रस्तावना
1.2.2 भक्तिकाल, ज्ञानमार्गी तथा प्रेममार्गी शाखाएं
1.2.2.1 ज्ञानमार्गी शाखा की प्रमुख विशेषताएं अथवा कबीर के काव्य की विशेषताएं
1.2.2.2 प्रेममार्गी शाखा की प्रमुख विशेषताएं अथवा जापसी के काव्य की विशेषताएं
1.2.3 सारांश
1.2.4 शब्दावली
1.2.5 अभ्यास के लिए प्रश्न।

1.2.0 उद्देश्य :

चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर सत्रहवीं शताब्दी की समाप्ति तक की अवधि को हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने एक मत से 'भक्तिकाल' की संज्ञा दी है। जिस कारण प्रांगण में चौदहवीं शताब्दी तक शस्त्रों की टंकार सुनाई देती थी। वहां अकस्मात् प्रभु–भक्ति की सौम्य वाणी कैसे गूंजने लगी यह प्रश्न महत्वपूर्ण है। इस संबंध में तत्कालीन परिस्थितियों की अवहेलना नहीं की जा सकती। राजनैतिक दृष्टि से आरक्षित तथा सामाजिक दृष्टि से अव्यवस्थित् भारतीय जनजीवन की डोर एक मात्र धर्मसूत्र में बंधी रह गई। निरंतर तीन–चार सौ वर्षों से युद्धों में दग्ध और त्रस्त रहने वाले समाज की चित्तवृति बाहरी हलचलों से उदासीन होकर अलौकिक सत्ता की ओर उन्मुख हो गई। यह स्वाभाविक ही था। हिन्दी साहित्य के पूर्ण मध्यकाल में भक्ति भावना का विकास मुख्यतः दो रूपों में हुआ है। एक निर्गुण भक्ति के रूप में तथा दूसरा सगुण भक्ति के रूप में। प्रस्तुत अध्याय में निम्नलिखित तथ्यों को स्पष्ट किया गया। जिससे आप :

– भक्तिकाल, ज्ञानमार्गी तथा प्रेममार्गी शाखाओं की परिभाषा से परिचित हो सकेंगे;
– ज्ञानमार्गी शाखा की प्रमुख विशेषताओं की जानकारी मिल सकेगी;
– ज्ञानमार्गी शाखा के प्रमुख संत कवियों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे;
– प्रेममार्गी शाखा की प्रमुख विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे और
– प्रेममार्गी शाखा के प्रमुख कवियों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

1.2.1 प्रस्तावना :

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में एक काव्यधारा–विशेष का प्रर्वतन हुआ, जिसे आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने निर्गुण ज्ञानमार्गी शाखा, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'निर्गुण भक्ति–साहित्य' तथा डॉ. रामकुमार वर्मा ने 'संत काव्य–परंपरा' का नाम दिया है। 'ज्ञानमार्गी शब्द से वह भ्रांति उत्पन्न होती है कि इस धारा के कवियों ने 'ज्ञान तत्त्व' को सवार्धिक महत्व दिया होगा, जबकि वास्तव में 'प्रेम के अढाई अक्षरों' के सम्मुख इन्होंने संसार के सारे ज्ञान को तुच्छ बताया है। भक्ति का

आलम्बन सगुण ईश्वर ही उपयुक्त है, अतः निर्गुण भक्ति नाम भी अपने में एक असंगति है। वस्तुतः इस काव्यधारा के कवियों का एक विशेष दृष्टिकोण है, जो 'संत' शब्द द्वारा भली प्रकार व्यंजित होता है, अतः इस धारा को संत काव्य की संज्ञा देना प्रथम दो नामों की अपेक्षा अधिक उचित है।

डॉ. पीताम्बरदत्त वड़थ्वाल ने 'संत' शब्द की व्युत्पत्ति शांत से मानी है और इसका अर्थ निवृतिमार्गी या वैरागी किया है। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी इस संबंध में लिखते है' "संत शब्द उस व्यक्ति की ओर संकेत करता है जिसने संत रूपी परमतत्व को अनुभव कर लिया हो, जो संतस्वरूप, सिद्ध वस्तु का साक्षात्कार कर चुका हो अथवा अपरोक्ष की उपलब्धि के फलस्वरूप अखंड सत्य में प्रतिष्ठित हो गया हो, वही संत है।" आचार्य विनय मोहन शर्मा के अनुसार व्यावहारिक दृष्टि से इसका अर्थ है– "जो आत्मोन्नति सहित परमात्मा के मिलन भाव को साध्य मानकर लोकमंगल की कामना करता है।" किंतु हमारे विचारानुसार संत शब्द सत से बना है, जिसका अर्थ ईश्वरोन्मुख कोई भी सज्जन हो सकता है। संकुचित अर्थ में निर्गुणोपासकों को ही संत कह दिया जाता है।

हिन्दी के 'प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा' को अब तक विभिन्न नामों से पुकारा जाता रहा है, तथा 'प्रेममार्गी (सूफी) शाखा', 'प्रेम–काव्य', 'प्रेम कथानक काव्य' प्रेमाख्यानक आदि यह आश्चर्य की बात है कि हिन्दी के विभिन्न विद्वानों ने इन विभिन्न नामों का प्रयोग करते समय इनके अर्थ का स्पष्टीकरण करने का प्रयास नहीं किया। ऐसी स्थिति में किसी भी ऐसे काव्य को, जिसमें प्रेम का चित्रण किया गया हो, इस परम्परा में स्थान दिया जा सकता है जबकि ऐसा करना ठीक नहीं। प्रेम एक ऐसी व्यापक भावना है कि उसका अस्तित्व न्यूनाधिक मात्रा में प्रायः सभी या अधिकांश रचनाओं में होता है। इसका संबंध केवल एक विशेष प्रकार के प्रेम, साहसिक प्रेम या स्वच्छंद प्रेम से है, जिसे अंग्रेजी में 'रोमांस' कहा जाता है। वस्तुतः इस काव्य–परम्परा का संबंध एक और तो विश्व में व्याप्त रोमांस–काव्य की परंपरा से है तथा दूसरी ओर भारत की प्राचीन कथा काव्य–परम्परा से है, इन दोनों तथ्यों की सूचित करने वाले क्रमशः दो शब्दों 'रोमांसिक' एवं 'कथा काव्य' को ग्रहण करते हुए हम इसे परम्परा के नाम से पुकारना अधिक उचित समझते हैं।

'रोमांस' शाब्दिक दृष्टि से तो फ्रांस की प्राचीन भाषा का नाम है, किंतु साहित्य के क्षेत्र में इसका तात्पर्य एक विशेष प्रकार की रचनाओं से लिया जाता है। इन रचनाओं में साहस, प्रेम, सौंदर्य, कल्पना एवं अलौकिक तत्वों की प्रमुखता रहती है। इसमें भी मुख्यतः प्रेम का चित्रण होता है, किंतु वह प्रेम एक प्रकार का होता है– उसमें साहस, शौर्य एवं संघर्ष का मिश्रण रहता है।

सूफी कवियों के काव्य ग्रंथों में प्रेमानुभूति का उत्कर्ष तथा शृंगार रस का सम्यक् परिपाक हुआ है। इन कवियों के प्रेमाख्यानों में शृंगार के दोनों संयोग और वियोग का मार्मिक चित्रण हुआ है। सूफी संत प्रेम की पीर के कवि थे। इन्होंने प्रायः प्रेमाख्यानक प्रबंध काव्यों की रचना की है। इसलिए इनका काव्य प्रेमपरक है, इसका सीधा सम्बन्ध भावना से है। सूफियों की रहस्य चेतन को प्रभावोत्पादक एवं सरसता के कारण विशेष महत्व दिया जाता है। यह रहस्य चेतना प्रेमाख्यानों पर आधारित है। प्रेमी–प्रेमिका में आत्मा और परमात्मा का मिलन दर्शाया जाता है।

1.2.2 भक्तिकाल, ज्ञानमार्गी तथा प्रेममार्गी शाखाएं :

भक्तिकाल का समय संवत् 1400 से 1700 तक स्वीकार किया जाता है। तीन सौ वर्षों के लंबे समय में प्रवाहित होती हुई भक्ति भावना एक रूप में प्रवाहित नहीं हो सकती थी। प्राचीन परम्परा के परिणामस्वरूप भक्ति–भावना दक्षिण भारत में चल रही थी। जब यह उत्तर भारत में आई तो उस पर मुसलमानों के बस जाने के परिणामस्वरूप एक ऐसे धर्म की आवश्यकता अनुभव

की जाने लगी, जो वर्गों को समान रूप से ग्राह्म हो सके। इसलिए मुसलमानों के एकेश्वरवाद और हिन्दुओं के अद्वैतवाद को मिलाकर भक्ति के क्षेत्र में निर्गुणभक्ति धारा का प्रारम्भ हुआ। इसके अनुसार भगवान निर्गुण है, निराकार है, उसकी प्राप्ति के लिए आचरणों की आवश्यकता नहीं बल्कि अन्तः साधना की आवश्यकता है।

दूसरी ओर भारतीय परम्परा के अनुसार सगुण भक्तिधारा भी चलती रही। इसके अनुसार भगवान बड़े दयालु हैं और अपने भक्तों की रक्षा के लिए समय–समय पर अवतार धारण कर पृथ्वी पर आते है। उनके अवतारों में राम और कृष्ण प्रमुख हैं। इस प्रकार भक्ति की दो धाराएं हो गई। (1) निर्गुण भक्तिधारा और (2) सगुण भक्तिधारा। आगे चलकर ये दोनों धाराएं दो–दो उपशाखाओं में बंट गई। निर्गुण भक्तिधारा की उपशाखाएं है– ज्ञानमार्गी शाखा और प्रेममार्गी शाखा। सगुण भक्तिधारा की उपशाखाएं हैं– कृष्ण भक्ति शाखा और राम भक्ति शाखा।

कालक्रम की दृष्टि से भक्ति–काव्य में ज्ञानमार्गी का उदय सर्वप्रथम हुआ। यह हिंदुओं की ओर से हिंदु–मुस्लिम एकता स्थापित करने की इच्छा का फल था। इसके प्रर्वतक कबीरदास हैं। नानक, रैदास, दादूदयाल, मलूकदास आदि प्रमुख कवि इस मत को बढ़ाने वाले हैं। इन संतों ने निर्गुणवाद के आधार पर राम और रहीम की एकता एवं हिन्दु–मुसलमानों की निरर्थक रूढ़ियों का विरोध कर दोनों जातियों में अवरोध भाव उत्पन्न करने का प्रयास किया। इस शाखा को संत मत और कवियों को संत कवि कहा जाता है।

जिन मुस्लिम कवियों ने सर्व–व्यापक परमात्मा को पाने के लिए प्रेम को साधन माना है, वे प्रेमाश्रयी शाखा के अंतर्गत आते है। इस शाखा के प्रायः सभी कवि सूफी साधक थे। सूफी साधना ईरान की देन है। 'सूफी संत परमात्मा को प्रेम का स्वरूप मानते हैं और उसे प्रेम द्वारा पाने की बात कहते है।' 'प्रेम की पीर' इस साधना का सब से बड़ा सम्बल है।'

संत साधना ज्ञान पर आधारित थी। अतः वह स्वतः ही शुष्क और नीरस थी। दूसरे ज्ञानमार्गी संत डांट–फटकार और खंडनात्मक प्रवृति अपनाए हुए थे, जिससे हीन भावना और द्वेष का उदय होता था। अतः हिंदु–मुसलमानों के मेल में संत मत अधिक सफल नहीं हो सका। सूफी फकीरों ने हिन्दु साधुओं के रहन सहन, रंग–ढ़ंग, भाषा और विचार शैली ही अपना कर अपने हृदय की उदारता का परिचय दिया। इन कवियों ने विभिन्न "लोकगाथाओं पर आधारित" लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की प्रतिष्ठा का प्रयास किया है। निर्गुण भक्तिधारा की यह शाखा हिन्दी साहित्य में प्रेममार्गी शाखा के नाम से विख्यात है।

1.2.2.1 ज्ञानमार्गी शाखा की प्रमुख विशेषताएं अथवा कबीर के काव्य की विशेषताएं :

हिन्दी साहित्य की निर्गुण भक्तिधारा के विकास का श्रेय अधिकतर उन संत कवियों को है जो ईश्वर प्राप्ति के लिए शास्त्रों के पठन–पाठन की अपेक्षा आत्म–ज्ञान और अनुभव–ज्ञान को आवश्यक मानते थे। इन संत कवियों ने गुरु की कृपा से प्राप्त ज्ञान की ज्योति को माया रूपी अंधकार दूर करने का मात्र उपाय बताया है।

इनके भक्ति सिद्धांतों में ज्ञान का महत्व सबसे अधिक होने के कारण इन्हें ज्ञानमार्गी कहा जाता है। ज्ञानमार्गी शाखा की प्रमुख प्रवृत्तियां अथवा विशेषताएं निम्नलिखित हैं :–

1. एकेश्वरवाद :

संत काव्य के रचयिता सभी कवियों ने अपने अपने ढंग से ईश्वर के होने का प्रतिपादन किया है। उनकी दृष्टि से ब्रह्म सदा एक रूप है। उसके विविध रूपों अथवा अवतारों आदि की कल्पना असंगत है। कबीरदास का कथन है–

"साहब मेरा एक है, दूजा कहा न होए।"

2. जीव और ब्रह्म का ऐक्य :

सभी ज्ञानमार्गी कवि जीव और ब्रह्म को अभेद मानते हैं। इसीलिए इनकी रचनाओं में जीव को 'अंतर्गत' समाधि द्वारा अपने भीतर स्थित ब्रह्म का साक्षात्कार करने का संदेश दिया गया है।

"मो को कहाँ ढूंढे रे बंदे, मै तो तेरे पास में"

3. माया को भक्ति के मार्ग में बाधक मानना :

कबीर जी ने कहा है :–

"माया महा ठगिनी हम जानी।"

इस प्रकार अन्य संत कवियों ने जीव और ब्रह्म के मध्य माया को अज्ञान अधिकार रूपिणी माना है और इसका निराकरण ज्ञान ज्योति द्वारा करने का संदेश दिया है।

4. गुरु की महत्ता :

ज्ञानमार्गी शाखा के सभी कवियों के काव्य–ग्रंथ महिमा से भरे पड़े हैं। 'गुरु' अथवा 'संतगुरु' के बिना ज्ञान (आत्मज्ञान) की प्राप्ति असम्भव मानते है। कबीर जी के कथानुसार–

"निहिं घर किसकी–चाँदनी, जिहिं घर सतगुरु नाहिं।"

नानक की स्व उपाधि ही गुरु है और इनके द्वारा प्रवर्तित सिक्ख पंथ 'गुरु–पंथ' कहलाता' है। नानक ने सर्वत्र एक ओंकार के रूप में ईश्वर का स्मरण करने के साथ ही 'सतगुरु प्रसादि' कहकर सर्वत्र को गुरु–कृपा की देन स्वीकार किया है। यह बात परवर्ती सिक्ख गुरुओं के काव्य में भी मिलती है।

5. साम्प्रदायिक एकता पर बल :

ज्ञानमार्गी शाखा के संत कवियों की सबसे बड़ी सामाजिक–सांस्कृतिक देन यह है कि उन्होंने जाति सम्प्रदाय पर आधारित भेद–भाव की निंदा कर, मानव मात्र की एकता प्रतिष्ठित की है। मध्यकाल की विशेष परिस्थितियों में हिन्दू मुस्लिम ऐक्य का सर्वाधिक प्रचार ज्ञानमार्गी संतों द्वारा ही हुआ है।

6. सत्संगति की प्रेरणा :

ज्ञानमार्गी कवियों के भक्ति–सिद्धांत सहज होते हुए भी कारण कार्य श्रृंखला में बंधे है। 'जीव' ब्रह्म ऐक्य के लिए 'माया' रूपी बाधा को दूर करना आवश्यक है। जो 'गुरु' द्वारा प्राप्त ज्ञान से संभव है। सच्चे गुरु की प्राप्ति 'साधु–संगति' अर्थात् अच्छे शील गुणवान लोगों के संपर्क से हो सकती है। 'कबीर संगति साधु की, हरै और की व्याधि।'

7. आचरण-शुद्धि पर बल :

सभी ज्ञानमार्गी कवि सदाचार पर विशेष बल देते है। सादगी मितव्ययता, सत्यभाषा, आत्म–संयम और मन–वचन कर्म की पवित्रता आदि गुण उनकी दृष्टि में मानव जीवन का आदर्श हैं। कबीर जी कहते हैं :–

"सांच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।"

इसी प्रकार उन्होंने 'मन चंगा जो तो कठोती में गंगा' की उक्ति को चरितार्थ करते हुए मन की शुद्धता का आग्रह किया है–

'माला फेरत जुग गाया, मिटा न मन का फेर।
कर का मनका छोडि, कर, मन का मनका फेर।।"

अथवा

'माला तो कर में फिरे, जीभ फिरे मुख मांहि।
मनुवा तो चहूं दिसि फिरै, यह तो सुमरिण नांहि।।'

8. ज्ञान का विशेष महत्व :

संत कवियों की भक्तिगत सर्व प्रमुख विशेषता ही 'ज्ञान' को महत्व देना है। कबीर, नानक, दादू आदि सभी कवियों ने ज्ञानखंड ज्योति के माध्यम से 'अलख' (अदृश्य) प्रेम का साक्षात्कार करने की बात कही है। 'ज्ञान' से उनका अभिप्राय 'आत्मज्ञान' अथवा 'आत्मानुभव' से है। पुस्तकीय ज्ञान अथवा शास्त्र ज्ञान कदापि नहीं–

"पोथी पढ़ि–पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय।"

एक अन्य कवि चरणदास ने कहा है–

'पंडित सोउ जो ब्रह्म पछानै।'

इस प्रकार आत्मस्थ ब्रह्म की पहचान ही संत कवियों के लिए वास्तविक 'ज्ञान' है जिसे उनकी वाणी में विशेष स्थान प्राप्त हुआ है।

9. सामाजिक कुरीतियों एवं आडंबरों का खंडन :

ज्ञानमार्गी संत कवियों का भक्ति भाव सहज है। जिससे सामाजिक जाति–पाति मतभेद, भेदभाव अथवा बाह्माडम्बरों का कोई स्थान नहीं। उनकी स्पष्ट घोषणा है–

"जात पात पूछे नहीं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई।"

संत कवियों की वाणी में तीर्थ, व्रत मूर्ति पूजा, रोजा, नमाज, हज यात्रा आदि धर्माचारणों को मात्र बाहरी दिखाया बताकर इनका बार–बार खंडन किया है। उदाहरणतयाः

जाति विरोध– "कह हिंदू मोहि राम पियारा, तुरक कहे रहिमाना।
आपस में दोउ लरि लरि मुए, मरम न काहु जाना।"

मूर्ति पूजा विरोध– "कंकर पत्थर जोरि के मस्जिद लई बनाय।
ता चड़ि मुल्ला बांगि दे बहरा हुआ खुदाय।।"

10. रहस्यवादी प्रवृति :

ज्ञान मार्गी कवियों में रहस्यवाद का पर्याप्त पुट है। ब्रह्म जीव, जगत और प्रकृति, दार्शनिक और आध्यात्मिक रहस्य का काव्य–रूप कथन करना साहित्य में 'रहस्यवाद' कहलाता है। संत कवियों ने विभिन्न रूपकों के माध्यम से जीव और रहस्यमय संबंधों को व्यक्त करने का प्रयास किया है।

11. जनभाषा का प्रयोग :

ज्ञानमार्गी शाखा के कवियों की एक साहित्यिक विशेषता यह है कि उन्होंने जन सामान्य की सहज भाषा में काव्य रचना की। प्रायः सभी ज्ञानमार्गी संत साधारण जनता में से भक्ति और साहित्यिक क्षेत्र में आए। इनका उद्देश्य जन साधारण तक अनुभव और विचार पहुंचाना था जिसके लिए उन्होंने सामान्य बोलचाल की भाषा में तुकबन्दी के रूप में अपनी बात की। इसलिए उनकी काव्य भाषा विविध बोलियों का सहज मिश्रण है। जो सभी को अपनी परिचित सी प्रतीत होती है।

अपवाद के रूप में कहीं–कहीं दर्शन शास्त्रों का परिभाषिक शब्दावली का प्रयोग भी संत कवियों की वाणी में दिखाई देता है। सहज, शून्य, ब्रह्मरंध्र, जीव, माया, झंड़ा, पिंगला सुषुम्ना आदि शब्द इसी प्रकार के है जिनका थोड़ा बहुत प्रयोग सभी ज्ञानमार्गी कवियों ने किया है।

12. मुक्तक काव्य रचना :

शैली की दृष्टि से ज्ञानमार्गी संत कवियों ने प्रायः मुक्त रूप को अपनाया है। इसमें दोहा–चौपाई–शैली तथा गेय पद शैली की रचना प्रचुर है। संत काव्य में 'नीतिकाव्य' के विभिन्न तत्वों का सम्यक् निर्वाह देखा जा सकता है। इस प्रकार प्रतिपाद्य विषयवस्तु एवं भाषा शैली दोनों दृष्टियों से ज्ञानामार्गी भक्तिकाव्य का हिन्दी साहित्य में एक विशेष स्थान है।

कबीर का संक्षिप्त परिचय :

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल की निर्गुण भक्ति धारा के प्रर्वतक, संत और सुधारक महात्मा कबीर को जन–साधारण के अपने कवि माने जाते है, हृदय से पवित्र, वाणी से अक्खड़ और प्रतिभा में अनुपम संत कबीर का व्यक्तित्व समूचे हिन्दी साहित्य में निराला और बेजोड़ है। कबीर का जन्म सम्वत् 1466 विक्रमी (सन् 1399 ई.) माना जाता है। यद्यपि इनके जन्म के सम्बंध में विद्वानों में अनेक मतभेद हैं तथापि इस बात से भी सहमत हैं कि कबीर का पालन पोषण नीरू और नीमा नामक जुलाहा दम्पति ने किया था। समय पाकर कबीर की भेंट स्वामी रामानंद से हुई जिन्होंने इन्हें राम नाम का मंत्र देकर भक्ति के पथ पर अग्रसर किया।

कबीर के मन में बाल्यकाल से ही भक्ति के अंकुर विकसित होने लगे थे। लोई नामक स्त्री से उनका विवाह हुआ जिसके घर पर एक पुत्र और एक पुत्री का जन्म हुआ, परंतु भक्ति के अंकुर तब बढ़कर वट वृक्ष का रूप ले चुके थे अतः उनका चित्र गृहस्थी जीवन में नहीं रम पाया था। वे आजीवन एक फक्कड़ संत के रूप में जन साधारण को भक्ति और ज्ञान का अमृत वितरण करते रहे। इनका देहावसन संवत् 1575 ई. में माना जाता है।

कबीर एक दार्शनिक संत थे। उनकी कविता में भारतीय अद्वैतवाद अपने सहज और सर्वजनग्राह्म रूप में व्यक्त हुआ है। उन्होंने एकेश्वरवाद की प्रतिष्ठा करते हुए कहा है – 'हम तो एक–एक करिजाना।'

कबीर एक ज्ञानवादी संत के रूप में विख्यात हैं परंतु उनकी भक्तिभावना में प्रेमतत्त्व का पुट भी है। उनका कथन है–

"जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि है मैं नाहिं।
प्रेम गली अति सांकरी, ता में दो ना समाहिं।।"

कबीर जीव और ब्रह्म के ऐक्य में माया को बाधक मानते हैं। जो सत् रज और तम नामक प्राकृतिक गुणों का फंदा लेकर बांधे रहती है माया रूपी अंधकार को दूर करने के लिए ज्ञान ज्योति की आवश्यकता है। जिनकी प्राप्ति किसी सच्चे गुरु की कृपा से ही संभव है। इसलिए कबीर की वाणी में बारम्बार गुरु महिमा का गायन हुआ है।

"सात समुद्र की मसि करो, लेखनि सब बनराए।
सब धरति कागद करों, गुरु गुन लिखा न जाए।।"

गुरु द्वारा प्राप्त ज्ञान शास्त्रीय तथा पुस्तकीय ज्ञान न होकर आत्मज्ञान एवं अनुभव ज्ञान है। जिसके कारण आवेश के सम्मुख माया प्रपंच टिक नहीं पाता। यह आत्मज्ञान मनुष्य को सामाजिक भेदभावों से मुक्त कर देता है। कबीर जी ने मानव मात्र एक ईश्वर की संतान मानते हुए वर्ग, भेद, पूजा, उपचार भरे आचार व्यवहार की घोर निंदा की है। उनका कथन है–

"ऊँचे कुल में जनमिया करनी ऊँच न होय।
सुबरन कलस सुरा भरा, साधु निंदत सोय।।"

मूर्ति पूजा अथवा तीर्थ यात्रा आदि को अनावश्यक बताने के साथ–साथ कबीर ने रोजा,

नमाज, हज आदि की उपेक्षा की है। वे कहते हैं कि–

"कांकर पत्थर जोरि कै, मस्जिद लई बनाए।
ता चढ़ मुल्ला बांग दे, बहिरा हुआ खुदाय?"

काव्य कला की दृष्टि से कबीर की सर्वप्रमुख विशेषताएं उनकी भाषा की सहजता है वह एक फक्कड़ संत थे अतः उनकी भाषा में पूर्वी हिन्दी, ब्रज, अवधी, राजस्थानी, अरबी, फारसी खड़ी बोली आदि तत्कालीन प्रचलित विविध भाषाओं का अद्भुत समन्वय है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कबीर की भाषा को खिचड़ी कहा है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने इसे 'सधुक्कड़ी' भाषा का नाम दिया है। कुछ भी हो भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था।

काव्य शैली की दृष्टि से कबीर का समूचा काव्य मुक्तक है। उन्होंने मुख्यतः दोहा, साखी, रमैनी और उल्टवासियों शैली में काव्य की रचना की है। उनके गेय पदों की संख्या भी पर्याप्त है। जिनमें नीति काव्य की प्रायः सभी विशेषताओं का सम्यक् समावेश देखा जा सकता है।

कबीर की एक मात्र प्रामाणिक रचना 'बीजक' मानी जाती है। उनके कुछ पद्य सिक्ख पंथ के आदिग्रंथ (श्री गुरु ग्रंथ साहिब) में भी संकलित है। हजारी प्रसाद द्विवेदी का कहना है कि 'हजार वर्ष के हिन्दी साहित्य के विकास में कबीर जैसा शक्तिशाली व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न नहीं हुआ।'

1.2.2.2 प्रेममार्गी शाखा की प्रमुख विशेषताएं अथवा जापसी के काव्य की विशेषताएं :

हिन्दी साहित्य के पूर्व मध्यकालीन में ऐसी अनेकों काव्य कृत्तियों की रचना हुई जिसमें प्रेम तत्त्व की प्रधानता है। इन प्रेमाख्यानक काव्यों में कल्पना का समावेश करके बड़े सरल और रोचक ढंग से किया गया है। से सभी प्रेमाख्यानक काव्य लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की प्रतिष्ठा करते हैं और एक प्रकार से प्रेमतत्त्व को ही प्रभु तक पहुंचाने का मार्ग मानते हैं। इसी विशेषता के आधार पर इस मार्ग की काव्यधारा के कवि सूफी थे, अतः इसे 'सूफी काव्यधारा' भी कहा जाता है। इस काव्यधारा के साहित्य को इतिहासकारों ने 'प्रेमाश्रयी' अथवा प्रेममार्गी शाखा की संज्ञा दी है। प्रेममार्गी शाखा अथवा सूफी काव्यधारा की प्रमुख साहित्यिक विशेषताएं निम्नलिखित हैं :–

1. एकेश्वरवाद :

निर्गुण भक्तिधारा में अन्य कवियों की भांति सूफी अथवा प्रेममार्गी कवियों ने भी 'ईश्वर' सिद्धांत को स्वीकार किया है। हिन्दी के प्रसिद्ध सूफी कवि मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत का आरम्भ इन शब्दों में किया है :

सुमरो आदि एक करतारू।
जहि जिउ दीन्ह संसारू।।

2. जीव ब्रह्म ऐक्य :

प्रेममार्गी कवि परमात्मा को नारी का रूप जीवात्मा को पुरूष रूप मानकर दोनों के ऐक्य में पूर्णत्व की कल्पना करते हैं। सभी प्रेमाख्यानों में नायिका तथा नायक की परिकल्पना इस आधार पर की गई है।

3. गुरु का महत्व :

सभी भक्ति कवियों के समान प्रेममार्गी कवि भी प्रभु की प्राप्ति की साधना गुरु के बिना असम्भव मानते थे। इनके द्वारा रचित प्रेमाख्यानों में कोई न कोई पात्र ऐसा अवश्य होता है जो

प्रेमी रूप साधक (जीव) को प्रेमिका रूपी साधन (परमात्मा) तक पहुंचाने का मार्ग निर्देश करता है। 'पदमावत' के अंत में जायसी ने लिखा है :

"गुरु सुआ सोई पंथ दिखावा"

4. शैतान को प्रेम में बाधा मानना :

सूफी मत के अनुयायी प्रेममार्गी कवियों ने जीव और ब्रह्म के मध्य में बाधा डालने वाले तत्व को 'शैतान' की संज्ञा दी है जो इस्लामी प्रभाव है। भारतीय दर्शन में 'माया' को बाधक माना जाता हैं, और गुरु कृपा से प्राप्त ज्ञान द्वारा माया के अंधकार के निराकरण की संभावना की जाती है। तब जीव ब्रह्म मिलन संभव है। किंतु सूफी मत के अनुसार प्रेममार्गी काव्यों में शैतान का कार्य जीवन ब्रह्म मिलने के उपरान्त आरम्भ होता है, जो जीव को पुनः ब्रह्म से विलग कर देता है। इस तथ्य को प्रेममार्गी कवियों के कला–पात्रों के माध्यम से स्पष्ट किया है, पद्मावत के अंतर्गत राघव चेतन नामक दूत को पद्मावती (ब्रह्म का प्रतीक) और रत्नसेन (जीव) के प्रतीक को अलग करने वाला शैतान बताया है।

5. समन्वय की भावना :

हिन्दी के अधिकांश कवि यद्यपि मुसलमान थे और इस्लाम के अनुयायी थे तथापि उन्होंने ज्ञानमार्गी संत कवियों की भांति कहीं भी किसी मत–सम्प्रदाय विचारों या क्रिया–कलापों का खंडन–मंडन नहीं किया। इन प्रेमाख्यानों में सभी वर्गों के पात्र, लोक विश्वास, उपासना–कर्म आदि कला के सहज अंग के रूप में दिखाई देते है। इससे उनके समन्वयात्मक दृष्टिकोण का परिचय मिलता है।

6. प्रेम तत्व की प्रधानता :

प्रेममार्गी कवियों ने प्रभु को पाने के लिए 'प्रेम तत्व' को सर्वोपरि साधन माना है। उसे प्रेम का अभिप्राय आध्यात्मिक अथवा अलौकिक प्रेम (इश्क हकीकी) है, जिसे लौकिक प्रेम (इश्क मिजाजी) के माध्यम से समझा और प्राप्त किया जा सकता है। इस तत्व की प्रतिष्ठा के लिए अधिकांश प्रेममार्गी कवियों ने प्रसिद्ध 'प्रेमतत्व' को सर्वोपरि साधन माना है और अंत में उसका आध्यात्मिक अर्थ भी स्पष्ट कर दिया है। जायसी कृत 'पदमावत' की निम्नलिखित अंतिम पंक्तियां इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है।

"प्रेम कथा कहि भालि विचार। बुझि लेहूजो बूझेपारहू।"

7. शृंगार के वियोग पक्ष की प्रमुखता :

प्रेममार्गी काव्यों में अधिकांशतः प्रेम का ही आख्यान होने के कारण शृंगार रस की प्रधानता है। 'विरह' के बिना ये कवि प्रेम भक्ति की स्थापना को अपूर्ण मानते हैं। 'पदमावत' में रत्नसेन नागमती और पद्मावती आदि के विरह प्रसंग अत्यन्त मार्मिक है।

8. रूपक और अन्योक्ति का प्रयोग :

हिन्दी के प्रायः सभी भक्ति कालीन प्रेमाख्यान काव्य अपने आप में 'रूप काव्य' अथवा 'अन्योक्तिकाव्य' हैं क्योंकि इनमें 'जीव और ब्रह्म' प्रकृति और जगह, गुरु और साधु, शैतान और आत्मा, मन और आत्मा आदि तत्वों की व्याख्या विभिन्न कथात्मक रूपकों के माध्यम से की गई है। नायक–नायिका तथा अन्य सभी पात्र इसमें प्रस्तुत (उपमेय) है जिनमें आत्मा–परमात्मा आदि अप्रस्तुत (उपमान) का प्रयोग करके 'अन्योक्ति' रची गई है। इस संबंध में जायसी रचित पद्मावत का यह उदाहरण दिया जा सकता है।

तब चितउर मन राजा कीन्हा।
हिय सिंघल बुधि पदमिनि चीन्हा।।
गुरु सुआ पंथ दिखावा।
नागमती यह दुनिया धंधा।।
राघव चेतन सोई सैतानूं।
माया, अलाउदीन सुल्तानूं।।

इनके अनुसार चितौड़ को शरीर, राजा को मन, सिंघलद्धीप को हृदय, पद्मावती को बुद्धि (ब्रह्म), तोते को गुरु, नागमती को संसारिक प्रपंच, राघव चतन को शैतान एवं अलाउदीन को माया का रूप बताकर 'जायसी' ने 'रूपक' अथवा 'अन्योक्ति' का निर्वाह किया है। इस युग के अन्य प्रेममार्गी कवियों ने भी इसी शैली का अनुसरण किया है।

रहस्यवादी प्रेममार्गी कवियों द्वारा रचित काव्यों में ऐसे प्रसंगों की बहुलता है जिन्हें सामान्य पाठकों के लिए समझना कठिन है। इन प्रेममार्गी कवियों ने नायिकाओं के दिव्य रूप सौदर्य एवं नायकों के साधना मार्ग का अलौकिक चित्रण करते हुए रहस्यात्मक उक्तियां कहीं है। जिन्हें गूढ़ दार्शनिक और अध्यात्मिक तत्वों का ज्ञाता पाठक ही समझ सकते हैं।

9. लोक जीवन का सजीव चित्रण :

प्रेममार्गी कवियों द्वारा रचित प्रेमाख्यानक काव्य अधिकतर लोक कथाओं पर आधारित हैं। अतः उन में जनजीवन का सहज और सजीव चित्रण मिलता है। उनमें पारिवारिक और सामाजिक जीवन चित्रवत साकार हो उठता है। सामान्य लोक विश्वासों, रीति–रिवाजों, क्रिया–कलापों का इन काव्यों में यथार्थ चित्रण हुआ है।

10. प्रबंध काव्य रचना :

हिन्दी के प्रायः सभी प्रेममार्गी कवियों ने प्रबंध काव्य की रचना की है। उनके प्रेमाख्यानकों में काव्य शास्त्रीय नियमों के अनुसार प्रबंध काव्यात्मकता का सम्यक निर्वाह हुआ है।

11. अवधी भाषा :

यह एक विचित्र संयोग है कि मध्य युग में रचित सभी प्रेमाख्यानों की भाषा प्रायः अच्छी ही है। वह अवधी साहित्यिक सी परिनिष्ठित न होकर प्रायः ठेठ लोकभाषा के निकट पड़ती है। यही कारण है कि प्रेमाख्यान अपने समय में लोकप्रिय रहे।

12. मसनवी शैली :

प्रायः सभी प्रेममार्गी कवियों में फारसी की मसनवी शैली में काव्य रचना की है। इस शैली में सात आठ सा कम अधिक छोटे छंदों के बाद एक बड़ा छंद रखा जाता है। भारतीय साहित्य में इस प्रकार की शैली प्रयुक्त रही है। अपभ्रंश–काव्य में पद्धति माया और भक्ति वाक्य में चौपाई दोहा के रूप में शैली का आभास मिलता है। प्रेममार्गी कवियों ने भी चौपाई दोहा छंद का प्रयोग किया है। वास्तव में कला काव्यों के लिए यह शैली इतनी उपयुक्त है कि बाद में तुलसी जैसे महाकवि ने भी इस शैली में 'रामचरितमानस' की रचना की।

मलिक मुहम्मद जायसी का संक्षिप्त परिचय :

भक्ति काल की निर्गुण काव्यधारा के अंतर्गत प्रेममार्गी शाखा में मलिक मुहम्मद जायसी का नाम सर्वोपरि है। जायस नगर का निवासी होने के कारण, उनके नाम के साथ 'जायसी' उपनाम जुड़ गया। इनके अन्तः साक्ष्य के आधार पर इनका जन्म संवत् 1521 विक्रमी (सन् 1464 ई.) के

आस–पास माना जाता है। क्योंकि इन्होंने स्वयं लिखा है–

'भा औतार मोरा नौ सदी'

('हिजरी इस्लामी सन् की नवीं शताब्दी में मेरा जन्म हुआ')। जायसी सूफी शाखा से संबधित थे। वे स्वयं भी सिद्ध फकीर थे। अमेठी के राजा मानसिंह इनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर इन्हें जायस से अमेठी ले आए। वहीं विक्रमी संवत् 1609 (सन् 1521 ई.) में इनका देहावसान हुआ। इनकी कब्र अमेठी में राजकोट के निकट विद्यमान है। जायसी की रचनाओं के साक्ष्य से यह ज्ञात होता है कि इन्होंने बाबर, हुमायूं, शेरशाह सूरी का शासन काल देखा था। इस प्रकार ये अपने समय की व्यापक राजनैतिक हलचल के साक्षी रहे। ऐसे समय में अव्यवस्थित और त्रस्त समाज को मानसिक शक्ति की आवश्यकता थी। वह जायसी के प्रेमाख्यानों द्वारा प्राप्त होनी स्वाभाविक थी। इनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं – पद्मावत, आखिरी कलाम और अखरावट।

हिन्दी काव्य जगत् में जायसी की ख्याति पद्मावत के कारण है। इसे प्रेमाख्यानक काव्य में चितौड़ के राजा रत्नसेन सिंधल द्वीप की राजकुमारी पद्मावती के प्रेम के माध्यम से सूफी सिद्धांत के अनुसार अलौकिक प्रेम का प्रतिपादन किया गया है। पद्मावती ब्रह्म का और रत्नसेन जीवात्मा का प्रतीक है। जायसी ने भारतीय लोककथा को आध्यात्मिक बाना पहनाकर भारतीय एवं मुस्लिम संस्कृति का सुंदर समन्वय किया है।

दार्शनिक विवेचन एवं प्रेम तत्व से भी अनूठी रचना है। यह हिन्दी का प्रथम पूर्ण सफल महाकाव्य माना जाता है। इसमें पद्मावत की भाषा ठेठ अवधी है। शैली की दृष्टि से फारसी की मसनवी शैली को हिन्दी का दोहा–चौपाई शैली में समन्वित करके जायसी ने एक सुंदर काव्य की रचना की है।

निष्कर्ष यह है कि जायसी ने प्रेमतत्व के व्यापक रूप को अलौकिक एवं लौकिक स्तर पर स्पष्ट करने के लिए भारतीय लोककथा को आधार बना कर जिस कुशल काव्य प्रतिभा का परिचय दिया है, वह लोक रंजन के साथ–साथ लोक मंगल की दृष्टि से भी सराहनीय है।

1.2.3 सारांश :

ज्ञानमार्गी शाखा का साहित्य युग की मांग के अनुरूप सर्जित हुआ था। युगीन विषमताओं का समतामूलक संदेश संत साहित्य में निहित था। संत साहित्य में श्रमण संस्कृति के तत्व निहित हैं। जैनों, बौद्धों, सिद्धों तथा नाथों की साधना पद्धति और विचारधारा के संतों पर गंभीर प्रभाव पड़ा है। नाथों सिद्धों की अनेक प्रवृत्तियों को ग्रहण किया तथा भोगवाद और वामाचार का खंडन किया।

संत–काव्य में अनेक न्यूनताएं होते हुए भी हिन्दी साहित्य के लिए गर्व की वस्तु है। जिस युग में इन्होंने काव्य रचना की, वह भारत के लिए अज्ञान, अशिक्षा और अनैतिकता का घोर अंधकारमय युग था और ये कवि उस युग की जनता के निम्नतम स्तर से संबंध रखते थे, फिर भी उन्होंने ज्ञान की जो ज्योति जलाई वह अद्भूत है, अपूर्व है। सुसंस्कृत युग और सुशिक्षित समाज के सुपठित कवियों द्वारा उच्चकोटि की रचनाओं का प्रणीत होना विशेष महत्व की बात नहीं, अपने पतन की चरम अवस्था में भी पतित, दलित एवं जर्जरित भारत का ऐसे महान् प्रतिभाशाली गंभीर चिंतक एवं स्पष्टवक्ता कवियों को जन्म दे देना एक ऐसा आश्चर्य है जिसका दूसरा उदाहरण विश्व इतिहास में शायद ही कहीं मिलें।

साहित्यिक दृष्टि से भी संत कवियों की देन का कम महत्व नहीं है। अपनी अनुभूतियों को सहज–स्वाभाविक भाषा में अभिव्यक्त करके उन्होंने काव्य के सच्चे स्वरूप का उद्घाटन किया।

आधुनिक कवियों एवं लेखकों की भांति उन्होंने अपने साहित्य में अपरिपक्व विचारों, अस्पष्ट जीवन–दर्शन और अधकचरे मनोविज्ञान का मिश्रण नहीं किया, अपितु मष्तिष्क के शुष्क विचारों को हृदय की अनुभूति में अवग्राहित करके व्यक्त किया है।

प्रेममार्गी काव्य परम्परा का वास्तविक आरम्भ आदि काल के लगभग मुल्ला दाऊद रचित चंदायन नामक प्रेमकाव्य से माना जा सकता है। जायसी, कुतुबन, मंझन, उसमान, नूर मुहम्मद आदि ने इस काव्यधारा को विकसित एवं पल्लिवत किया।

इतिहास एवं विकास की दृष्टि से इस काव्यधारा में मलिक मुहम्मद जायसी का नाम मंझन के पश्चात् आता है। लेकिन वे हिन्दी सूफी काव्य के प्रतिनिधि एवं सर्वप्रमुख कवि हैं। उन्होंने अनेक ग्रंथ लिखकर इस परम्परा को समृद्ध किया है। पद्मावत उनकी अक्षय कीर्ति का अमर रत्न है। इसे हिन्दी सूफी महाकाव्य माना गया है। यह हिन्दी साहित्य का प्रथम पूर्णरूपेण प्रामाणिक महाकाव्य कहलाने का अधिकारी है। इस दृष्टि से जायसी हिन्दी के प्रथम महाकाव्य रचयिता है।

अंत में हम कह सकते हैं कि सौंदर्य, प्रेम और विरह की व्यंजना की दृष्टि से इस परम्परा का महत्व है। यद्यपि इस परम्परा के कवियों का प्रेम सामान्यतः लौकिक स्तर का है। किन्तु उसका आदर्श अत्यंत उच्च है। उन्होंने प्रेम में साहस, त्याग और आत्म–बलिदान के भावों का सम्मिश्रण करके उसे कामुकता के स्तर से बहुत ऊँचा उठा दिया है।

1.2.4 शब्दावली :

शब्द		अर्थ
प्रादुर्भाव	–	प्रकट होना, उत्पत्ति
परिमार्जित	–	सुधरा हुआ
कीर्ति	–	सुयश
उत्कृष्ट	–	श्रेष्ठ
रूढ़ियों	–	परम्पराएं
निरर्थक	–	जिसका अर्थ न हो
स्मृतियां	–	यादें

1.2.5 अभ्यास के लिए प्रश्न :

(1) भक्तिकाल की निर्गुण शाखा को कितने भागों में बांटा गया है? उनके नाम लिखिए।

(2) भक्तिकाल की निर्गुण ज्ञानमार्गी शाखा के दो प्रमुख कवियों के नाम लिखिए तथा उनकी रचनाओं का परिचय दीजिए।

(3) भक्तिकाल की निर्गुण प्रेममार्गी शाखा के तीन प्रमुख कवियों के नाम लिखिए तथा उनकी रचनाओं का उल्लेख कीजिए।

(4) भक्तिकाल का आरम्भ कब हुआ और इसकी मूल प्रेरणा भी लिखिए।

(5) संत काव्य की केवल दो विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

पाठ संख्या : 1.3 **लेखिका : डॉ॰ एस॰ के॰ खुमार**

सूरदास, तुलसीदास के काव्य की विशेषताएँ

रूपरेखा

1.3.0 उद्देश्य
1.3.1 प्रस्तावना
1.3.2 कृष्णभक्त कवि सूरदास का परिचय और काव्यगत विशेषताएँ
1.3.3 तुलसी के काव्य की विशेषताएं और तुलसीदास का परिचय
1.3.4 सारांश
1.3.5 शब्दावली
1.3.6 अभ्यास के लिए प्रश्न।

1.3.0 उद्देश्य :

भगवान् के सगुण साकार रूप को आधार मान कर भक्ति साधना और काव्य साधना करने वाले संतों की परम्परा सगुण भक्ति शाखा के नाम से प्रसिद्ध है। निर्गुण और निराकार की उपासना से जन जीवन इतना प्रभावित नहीं हुआ, जितना सगुण और साकार की उपासना पद्धति से। इन भक्तों ने भगवान् राम और कृष्ण को अपना इष्टदेव मान कर अपने दुःखों का हरणकर्ता, मुक्ति प्रदाता माना। इस धारा के कवि राज्याश्रित नहीं थे। उन्होंने भगवान को भक्ति में आनंद विभोर हो जो कुछ कहा या लिखा, वह स्वातः सुखाय न होकर सर्वजन हिताय था। इष्टदेव का गुणगान करना वे अपना धार्मिक कर्त्तव्य समझते थे। सगुण भक्ति को दो भागों में विभाजन किया गया। रामभक्ति शाखा और कृष्ण भक्ति शाखा। प्रस्तुत अध्याय के पठन के पश्चात् हमें निम्नलिखित जानकारी प्राप्त हो सकेगी :

- कृष्ण भक्ति शाखा के विषय में जानकारी प्राप्त हो सकेगी;
- कृष्ण भक्ति शाखा की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे;
- कृष्ण भक्ति शाखा के कवियों की जीवनी तथा कृतित्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- राम भक्ति शाखा के विषय में जान सकेंगे;
- राम भक्ति शाखा की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे;
- राम भक्ति शाखा के प्रमुख कवियों का परिचय पा सकेंगे।

1.3.1 प्रस्तावना :

कोई भी आंदोलन समाज से निरपेक्ष नहीं हो सकता। भक्ति उस युग की मांग थी वह युग के प्रश्नों का सही उत्तर थी। एक ओर हिन्दू समाज अपने भीतरी विकृतियों से रूग्ण था। दूसरी ओर विधर्मियों का तलवार के बल पर धर्म प्रचार उन्हें आत्मरक्षा के लिए अधिक सचेत बना रहा था। अतः धार्मिक नेताओं के लिए यह जरूरी हो गया था कि वे अपने धर्म को नैतिकता और सुदृढ़ विश्वास की उस भित्ति पर प्रतिष्ठित करें जो विधर्मियों के आघातों के विरूद्ध रक्षा–दुर्ग बन सके। भक्ति–आंदोलन ने समाज में ईश्वर विश्वास और आस्था के माध्यम से आत्मविश्वास और निर्भयता का संचार किया, साथ ही ज्ञान, सत्कर्म, सत्संकल्प, सदाचार आदि मूल्यों की प्रतिष्ठा द्वारा सुदृढ़ सामाजिक संगठन की नींव डाली। भगवान की महिमा से भक्तों ने आत्मगौरव या मानव महिमा का साक्षात्कार किया।

सगुणोपासकों के राम अपनी सारी शक्ति राक्षसों, म्लेच्छों, अत्याचारियों के दमन में लगाते प्रतीत होते हैं और लोकरक्षण का विश्वास जगाते हैं। निर्गुणोपासकों के राम निर्गुण होने के नाते घट–घट वासी हैं। इसलिए वे सभी का सद्वृत्तियों और सत् क्रियाओं के मूल स्त्रोत हैं। इस प्रकार संतों ने हिंदूओं तथा मुसलमानों को सद्भावना और सदाचार के सोपान पर समान रूप से लाकर खड़ा किया। भक्तिकालीन संतों का महत्वपूर्ण उद्देश्य सम्प्रदाय–निरपेक्षता और भावनात्मक एकता रहा है।

यद्यपि भक्तिकाल में संत काव्य परम्परा सूफियों और सूफीतर प्रेमाख्यानकारों की प्रेमाख्यान–परम्परा रामभक्ति–परम्परा और कृष्ण–भक्ति परम्परा के रूप में चार परम्पराएं चलती रहीं, तथापि भिन्नता के बावजूद इन चारों में कई सामान्य प्रवृतियां भी प्राप्त होती हैं। जैसे– ईश प्रेम के माध्यम से मानवीय प्रेम का प्रसार करते हैं। कृष्ण भक्ति तो है ही प्रेमाभक्ति प्रेमाख्यानकारों का लक्ष्य भी प्रेम–निरूपण है। तुलसी ने भी अपनी भक्ति को प्रेमाभक्ति माना है। कबीर भी ज्ञानमार्गी से बढ़कर प्रेममार्गी हैं। सभी संत और भक्त शारीरिक, मानसिक और आचारिक पवित्रता पर बल देकर ईश साधना का ऐसा सुगम मार्ग सुझाते हैं जिसमें निर्गुण–सगुण, ज्ञान और भक्ति का भेद मिट जाता है और समन्वय की भावना का विकास होता है। सभी गुरुमहिमा को ईश महिमा के समान मानते हैं। निर्गुणोपासकों के समान ही सगुणोपासक भी अपने उपास्य को तात्विक रूप में निर्गुण ही मानते हैं। महानता और दिव्यता की उपासना सभी में समान है।

1.3.2 कृष्ण भक्ति शाखा की विशेषताएं अथवा सूरदास के काव्य की विशेषताएँ :-

यह काव्य परम्परा युगीन परिवेश में व्याप्त अवसाद, संत्रास, निराशा, वैराग्यवृत्ति, उपदेशात्मकता, मायावाद आदि की प्रतिक्रिया के रूप में उद्धृत हुई थी। इनका लक्ष्य था दम तोड़ते हुए समाज को उल्लास, उमंग, आशा और आस्तिकता की राह दिखाना।

कतिपय विद्वानों ने हिन्दी में कृष्ण काव्य का आरम्भ विद्यापति से माना है। विद्यापति के काव्य में भक्ति की अपेक्षा शृंगारिकता अधिक है। अधिकांश विद्वान सूरदास से ही हिन्दी में कृष्ण भक्तिधारा का आरम्भ मानते हैं। उत्तर भारत में कृष्ण भक्ति के प्रचार का श्रेय भी बल्लभाचार्य को है। कृष्ण के अनुग्रह को सर्वोपरि मानकर उन्होंने पुष्टि मार्ग की स्थापना की जिसमें विटठ्लदास से संवत् 1602 में अपने पिता के और अपने शिष्यों में से चार–चार अष्टछाप के नाम से कवियों और संगीतज्ञों की मंडली की स्थापना की। ये कवि थे सूरदास, कृष्णदास, परमानन्द दास, कुम्भनदास, नंददास, चर्तुभुजदास, छीतस्वामी और गोबिंद स्वामी। इनमें से प्रथम चार वल्लभाचार्य के और चार विट्ठलदास के शिष्य थे।

महाकवि सूरदास :

'अष्टछाप' के कवियों में सूरदास का स्थान सर्वोपरि है अतःसाक्ष्य और बहिर्साक्ष्य के आधार पर विद्वानों ने अनुमान लगाया है कि उनका जन्म सं. 1535 में वल्लभगढ़ के निकट साही नामक ग्राम में एक निर्धन सारस्वत ब्राह्मण के घर हुआ। वे नेत्रहीन थे। इस बात को तो सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है, किंतु वे जन्मांध थे या बाद में अंधे हुए यह बात विवादग्रस्त है। वे श्रीनाथ जी के मन्दिर में नित्य कीर्तन किया करते थे। उन्होंने लगभग एक लाख पदों की रचना की।

रचनाएँ :

नागरी के अनुकरण पर लिखा होने पर ही उसका अनुवाद अथवा भावानुवाद नहीं है। यह एक ऐसा मुक्तक काव्य है जिसमें भगवान कृष्ण की लीला का विस्तृत वर्णन फुटकर पदों में किया है। सूर के कृष्ण लोक रक्षक की अपेक्षा लोक रंजक अधिक हैं। भागवत का दृष्टिकोण अध्यात्मपरक है तो सूर का लीलापरक। 'सूरसागर' में हमें शृंगार और वात्सल्य रस का अनुपम चित्रण मिलता

है। मुक्तक छोटे होते हुए भी इसमें कृष्ण के जीवन की क्रियात्मक कथा मिलती है। 'भ्रमरगीत', 'सूरदास' का अत्यन्त मर्मस्पर्शी अंग है। कृष्ण के वियोग से पीड़ित गोपियों के उद्‌गार अत्यंत मर्मस्पर्शी है। गोपियों ने भ्रमर के ब्याज से कृष्ण को उपालम्भ दिया है। भ्रमर गीत में सगुण से निर्गुण पर, सरसता से शुष्कता पर प्रेम के दर्शन पर और भक्ति ने ज्ञान पर विजय पाई है।

(ख) सूरसारावली :

इनकी रचना 'सूरसागर' की भूमिका रूप में की गई प्रतीत होती है। 'सूरसागर' की हरी लीला का सिद्धांत निरूपण ही इस ग्रंथ का विषय है।

(ग) साहित्य लहरी :

यह दृष्टिकूट पदों में रचित ग्रंथ है। जिसमें चमत्कारी ढ़ंग से राधा–कृष्ण की अनुराग लीला, नायिका भेद, अलंकार और रसों का विवेचन है।

काव्यगत विशेषताएं :

सूरदास की दृष्टि में इस प्रपंचात्मक संसार से मुक्ति का उपाय हरिभक्ति है, जिसमें लीलागान का महत्व सर्वोपरि है। भक्ति सूर के लिए साधन न होकर साध्य बन गई। सूरदास ने योगमार्ग की निंदा करते हुए माधुर्य भाव से की जाने वाली कृष्ण की प्रेम भक्ति को महत्व दिया है दानलीला, चीरहरण और रामलीला से सूर के भक्ति भाव को अभिव्यक्ति मिली है। जिसके लिए आत्मसमर्पण और अनन्य भाव की आवश्यकता है। कृष्ण प्रेम में दीवानी गोपियां लोक मर्यादा की बिल्कुल चिंता नहीं करती। विरह व्याकुल गोपियों की दशा हृदय–द्रावक है। सूर काव्य का वियोग पक्ष संयोग से अधिक प्रभावशाली है।

सूर ने राधा और गोपियों के माध्यम से अपने हृदय की समस्त पीड़ा को मानो अपने आराध्य श्री कृष्ण के चरणों में उड़ेल लिया है। कृष्ण प्रेम में मग्न गोपियों के लिए ज्ञान–योग साधन निरर्थक से थे। सूरदास में भक्ति–भावना की प्रमुखता होने पर भी शुद्धद्वैत से प्रभावित ब्रह्म, जीव, माया आदि का दार्शनिक विवेचन मिलता है। पुष्टिमार्ग के दार्शनिक सिद्धांतों के अनुकूल उन्होंने आनंद स्वरूप श्रीकृष्ण के लीलागान को बहुत महत्व दिया है। सूर में भी श्री कृष्ण के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव मिलता है।

वल्लभ सम्प्रदाय से दीक्षित होने से पूर्व सूर ने जिन दैन्य पूर्ण पदों की रचना की उनमें उनके भक्त हृदय की समस्त ग्लानि, दीनता पश्चाताप, निरीहता, संसार के प्रति विरक्ति और सम्पूर्ण आत्मसमर्पण के दर्शन होते हैं। उनका आत्म–निवेदन अत्यन्त हृदयग्राही बन पड़ा है।

वात्सल्य चित्रण :

सूर का वात्सल्य चित्रण विश्व साहित्य में बेजोड़ है। सूर के पास मानो माता का हृदय है। उन्होंने कृष्ण के बाल जीवन की साधारण चेष्टाओं का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक और कलात्मक चित्रण किया है। माता यशोदा कृष्ण को कुदृष्टि से बचाने के लिए काजल का टीका लगाती है। दूध पिलाने के लिए उसे उसके साथियों जैसी पुष्ट चोटी बनाने का लालच देती है, यशोदा का समस्त व्यक्तित्व ही कृष्ण प्रेम में घुल मिल सा गया है। कभी वे कृष्ण को झूला झुलाती है, कभी लोरियां गाकर सुलाती है। कृष्ण की दंतुलिया निकलने और उनके घुटने के बल चलने से उल्लासित हो उठती है। वह उनकी अंगुली पकड़कर चलना सीखाती है, बलराम कृष्ण का झगड़ा, कृष्ण की शरारतें, गोपियों के उपालम्भ के बहाने यशोदा का स्नेहमय क्रोध आदि का अत्यन्त हृदय ग्राही चित्रण सूर ने किया है।

शृंगार वर्णन :

सूर का श्रृंगार वर्णन भक्ति के मूल्य से अत्यन्त सौम्य एवं भव्य बन पड़ा है। गोपियों का शैशव, कृष्ण प्रेम विकसित होकर यौवन के माधुर्य रस में परिणत हो जाता है। पनघट, यमुना स्नान और रासलीला के प्रसंगों में गोपिकाओं के उत्कृष्ट प्रेम के दर्शन होते हैं। जिसमें प्रेम विलास न होकर आत्मानुराग का प्रकाशन है। सूर का वियोग चित्रण अत्यंत करूणा, मर्मस्पर्शी, हृदयग्राही है। कृष्ण वियोग से पीड़ित गोपियों के नयन 'निसिदिन बरसत' रहते हैं। राधा के वियोग दग्ध रूप से मानों पत्थर पिघल जाता है। माधव रटते–रटते स्वयं माधव हो गई थी।

भाषा :

सूरदास ने अपने इष्टदेव की लीलाभूमि की भाषा ब्रज को अपने काव्य के लिए अपनाया है, सूर की रचनाओं में हमें ब्रजभाषा की परिनिष्ठत और परिमार्जित रूप के दर्शन होते हैं। उनकी भाषा में भले ही लिंग और वाक्य व्यवस्था में गड़गड़ी हो किंतु भाषा के प्रभाव में कुछ खटकता नहीं। सूर की भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ खड़ी बोली, पूर्वी हिन्दी, बुंदेलखंड़ी राजस्थानी आदि शब्दों का अत्यन्त सुन्दर प्रयोग हुआ है। इनकी कोमलकांत पदावली से युक्त भाषा में भाव प्रवाह और शब्द छन्द प्रवाह चित्र खींचने की अनुपम सामर्थ्य है।

छंद :

सूर के अधिकांश पद कीर्तन–गेय शैली में है। इसलिए उनमें राग–रागनियां अधिक है। इस पर भी सूर ने दोहा, रोला, चौपाई, सवैया आदि छंदों का प्रयोग किया है। सूर काव्य में मानो भावों का उमड़ता सागर है। सूरदास संगीतज्ञ थे और उनका शास्त्रीय काव्य संगीतात्मकता से परिपूर्ण है। गोपियों तथा यशोदा के माध्यम से कवि ने मानो निजी अनुभूतियों का चित्रण किया है। सूर कृष्ण भक्ति काव्य के प्रतिनिधि कवि हैं। हिन्दी काव्य कोश में चमकते हुए सूर्य हैं।

1.3.3 तुलसी के काव्य की विशेषताएं :

भक्तिकाल की पृष्ठभूमि के स्पष्टीकरण में हमनें यथास्थान तुलसीदास के माध्यम से रामकाव्य परम्परा की कुछ विशेषताओं की ओर संकेत किया है। यह सर्वमान्य है कि हिन्दी में रामकाव्य से अभिप्राय तुलसीदास ही है। इसलिए तुलसीदास की समस्त विशेषताओं को विद्वानों ने रामभक्ति शाखा अथवा परम्परा के अंतर्गत विवेचित किया है। इस काव्यधारा का मूल प्रतिपाद्य आदर्श और मर्यादा रहा है। समाज के प्रति पूर्ण निष्ठा भाव इनमें सर्वत्र है। इसी प्रकार समन्वय भावना, भक्ति भावना, अछूतोद्वार, शाश्वत मूल्यों की प्रतिष्ठा आदि प्रवृतियों की चर्चा हम यहां कर रहे है :

समन्वय भावना :

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार 'तुलसी' का सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, रामचरित मानस शुरु से लेकर आखिरी तक समन्वय का ही काव्य है।

लोक संग्रह की भावना :

तुलसी के राम रक्षक मर्यादा पुरुषोतम राम हैं। जिन्होंने अपने जीवन दर्शन को संसार के सम्मुख रखा है। तुलसी ने आदर्श पात्रों को दुनिया के सामने प्रस्तुत किया। राम आदर्श पुत्र, आदर्श भाई और आदर्श राजा हैं, सीता आदर्श पत्नी हैं। भरत और लक्ष्मण आदर्श भाई हैं। कौशल्या आदर्श माता है। हनुमान आदर्श सेवक हैं। तुलसी वास्तव में लोकनायक कवि हैं।

भक्ति का स्वरूप :

तुलसी एक महान कवि थे अपने युग की प्रायः सभी शैलियों को अपनाया है। दोहा, चौपाई, छप्पय पद्धति, कवित सवैया पद्धति आदि सभी शैलियों का निर्वाह तुलसी काव्य में हुआ है। इस रामकाव्य में रसों का अत्यंत सुंदर प्रयोग हुआ है। तुलसी के मानस और केशव के रामचंद्रिका में सभी रसों के दर्शन होते हैं।

भाषा :

रामचरित मानस अवधी भाषा में लिखा गया है। तुलसी ने अवधी के साथ–साथ ब्रज भाषा में भी रचनाएं की हैं। केशव के रामचन्द्रिका की भाषा ब्रज है। दोनों भाषाओं में अन्य भाषाओं के शब्द सहज ही आ गए हैं।

छंद :

रामचरित मानस की रचना दोहा, छंद में हुई जो प्रबंध काव्य के लिए उत्कृष्ट छंद है। इनके अतिरिक्त कुडलियां छप्पय, कवित, सौरठा, तोमर आदि का प्रयोग भी रामकाव्य में हुआ।

अलंकार :

रामभक्ति कवि विद्वान पंडित भी थे। उनके काव्य में अलंकारों का सहज प्रयोग है। तुलसीदास के काव्य में वैसे तो अनेक अलंकारों का प्रयोग है किंतु उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा का प्रयोग अधिक है।

रामभक्ति साहित्य यद्यपि परिमाण में चाहे कम हो किंतु उस की गिनती हिन्दी के प्रथम कोटि के साहित्य में की जा सकती है तथा तुलसी हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवियों में से एक हैं।

महाकवि तुलसीदास का परिचय :

लोकनायक तुलसीदास हिन्दी के अत्यन्त समर्थ एवं लोकप्रिय कवि थे। किंतु उनका जीवन वृत प्रामाणिक रूप से उपलब्ध नहीं है। उनके परिचय के लिए बाहय साक्ष्यों की अपेक्षा तुलसी के अपने ग्रंथों पर ही निर्भर करना उचित है।

तुलसी का जन्म सूकर अथवा सोरों में भाद्र पक्ष शुक्ल 11 दिन मंगलवार सन् 1571 को हुआ। आरम्भ में उन्हें 'रामबोला' कहते थे। जो बाद में तुलसी कहलाए। उनकी माता का नाम हुलसी था, किंतु पिता के संबंध में प्रामाणिक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। बाबा नरहरि दास उनके गुरु थे। जिनसे उन्होंने शास्त्र ज्ञान प्राप्त किया। तुलसी का बाल्यकाल अत्यंत कष्टों में बीता माना जाता है। उनके जन्म लेते ही माता–पिता ने उन्हें छोड़ दिया। तुलसी का विवाह रत्नावली से होने की बात सिद्ध है। जनश्रुति के आधार पर पत्नी से मीठी, भर्त्सना पाकर इन्हें वैराग्य हुआ और वे रामभक्त बन गए। गृह त्याग के उपरांत उन्होंने देश पर्यटन किया। वे काशी और चित्रकूट में रहे। वृद्धावस्था में शरीर रोग जरर्जित हो गया था। उनका निधन श्रावण कृष्ण तृतीया शनिवार सम्वत् 1580 को माना जाता है।

तुलसीदास अत्यन्त विनम्र स्वभाव के थे और उन्हें अपने आराध्य राम पर अटूट विश्वास था। वे महात्मा होने के साथ एक महान कवि भी थे। उनकी रचनाओं को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. प्रबंध काव्य : रामचरित मानस, रामलला, नहछू, पार्वती–मंगल तथा जानकी मंगल।
2. गीति काव्य : गीतावली, कवितावली और विनय–पत्रिका।
3. मुक्तक काव्य : वैराग्य संदीपनी, बखै रामायण, दोहावली, हनुमान बाहुक।

तुलसी की महान रचना रामचरित मानस का आधार वाल्मीकी रामायण होने पर भी इनमें

कथा–विस्तार, दार्शनिक विचारों और भक्ति–भाव के प्रतिपादन के लिए आध्यात्म रामायण गीता, उपनिषद पुराण आदि का आश्रय तुलसी ने लिया। कथा–वस्तु, चरित्र–चित्रण संवाद योजना आदि की दृष्टि से ये उत्कृष्ट काव्य है इसमें सभी रसों का समावेश है किंतु इसका अंगीरस शांत है। भावपक्ष और कलापक्ष दोनों ही दृष्टियों में एक महान ग्रंथ है।

'रामलला नछहू' में राम के यज्ञोपवीत अवसर पर रचे बीस छंद हैं। 'पार्वती मंगल' में शिव पार्वती के विवाह का वर्णन है। 'जानकी मंगल' में राम विवाह का परिचय दिया है।

'गीतावली' में गीति शैली में रामकथा कही गई है। 'कृष्ण गीतावली' में ब्रजभाषा में लिखी गई है और इसके कृष्ण लीला का गान है।

'रामचरित मानस' के उपरांत 'विनयपत्रिका' तुलसीदास के काव्य में दूसरा स्थान रखती है। इसमें भक्ति तथा वैराग्य आदि के संबंध में विचारों का प्रतिपादन है। इनकी भाषा ब्रज है, इसमें वाक् चातुर्य पाण्डित्य और उक्ति–वैचित्रय के दर्शन होते हैं।

वैराग्य संदीपनी उनकी विरक्त होने के समय की रचना है। इसमें राम–महिमा, ज्ञान–वैराग्य और संत स्वभाव आदि का परिचय है। 'वरवै रामायण' में रामकथा का परिचय है। दोहावली में नीति, भक्ति, राम महिमा और नाम महात्म के दोहे है। 'हनुमान बाहुक' की रचना कवि ने अपनी पीड़ाग्रस्त बाहु के स्वास्थ्य के लिए की जिसमें हनुमान की स्तुति है। कवितावली में कवित, सवैया, छप्पय आदि छंदों में सात कांडों में रामकथा कही गई है।

काव्य सौष्ठव :

तुलसी हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार हैं। उनका काव्य उत्कृष्ट कोटि का है। इसमें रीति, नीति, वस्तु, व्यवहार वर्णन भावप्रधानता और संवाद में उपयुक्त संतुलन है। भाव पक्ष की उत्कृष्टता के साथ–साथ तुलसी के काव्य में वाग्विदग्धता और रमणीयता का अनूठा रूप दृष्टिगोचर होता है। अवधी और ब्रज भाषा दोनों पर तुलसी को समान अधिकार प्राप्त था। बुन्देली, भोजपुरी और प्रचलित अरबी–फारसी शब्दों का आवश्यकता अनुसार प्रयोग किया। तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग होने के बाद भी भाषा में क्लिष्टता नहीं, अपितु उसमें सहजता और पात्रानुकूलता के गुण विद्यमान हैं। दोहा, चौपाई, सोरठा, हरिगितिका, बखै, कवित, सवैया आदि छन्दों का कवि ने अत्यन्त सफल प्रयोग किया है। अलंकारों में शब्द कौतुक न होकर रमणीयता है। कवि ने उत्प्रेक्षा उपमा आदि अंलकारों को बहुत सुन्दर रूप से प्रयोग किया है।

दोनों पर तुलसी को समान अधिकार प्राप्त था। बुन्देली, भोजपुरी और प्रचलित अरबी–फारसी शब्दों का आवश्यकता अनुसार प्रयोग किया है। तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग होने के बाद भी भाषा में कलिष्टता नहीं अपितु उसमें सहजता और पात्रानुकूलता के गुण विद्यमान है। दोहा, चौपाई, सोरठा, हरिगीतिका, बरवै, कवित, सवैया आदि छन्दों का कवि ने अत्यन्त सफल प्रयोग किया है। अलंकारों में शब्द कौतुक न होकर रमणीयता है। कवि ने उत्प्रेक्षा, उपमा आदि अलंकारों का बहुत सुन्दर रूप से प्रयोग किया है।

तुलसी ने प्रबंध और मुक्तक दोनों शैलियों में उत्कृष्ट रचना की है। तुलसी ने वीर काव्य की ओजपूर्ण शैली, विद्यापति और सूर की गीति शैली, चारण कवियों की छप्पय कवित शैली और लोकगीत शैली सभी का सफल प्रयोग किया है।

तुलसी ने अपने काव्य में सभी स्थायी रसों का समावेश किया है। तुलसी रस सिद्ध कवि थे और उनकी रस व्यंजना अनूठी है। मानव जीवन के विविध रूपों की तुलसी को गहरी परख थी। मानस के भावों की विविधता और तीव्रता उनके काव्य के अनुपम रूप हैं। उनको शृंगार वर्णन में

मर्यादा होने पर भी सजीवता है हास्य, वीभत्स, रौद्र, अद्‌भुत, वीर, शान्त आदि सभी रसों का अत्यन्त सफल प्रयोग उनके काव्य में है।

तुलसी एक महान समन्वयकारी कवि थे। उन्होंने सामाजिक और आर्थिक समन्वय के द्वारा सामाजिक समस्याओं के समाधान का प्रयास किया। उस समय देश के धार्मिक क्षेत्र के सम्प्रदायों में कलह चल रही थी। जिससे हिन्दु समाज विघटित हो रहा था। ऐसी अवस्था में तुलसी ने देश को विभिन्न विचार पद्धतियों साधनाओं जातियों में समन्वय स्थापित किया वैष्णवों और शैवों के झगड़ों को समाप्त करने के लिए दोनों मतों का समन्वय किया। उनके मानस में राम शिव के और शिव राम के उपासक है। उन्होंने निर्गुण–सगुण, ज्ञान–भक्ति का समन्वय स्थापित किया। उन्होंने लोक मर्यादा, वर्णव्यवस्था और सदाचार का आदर्श प्रस्तुत किया उनके काव्य में अनेक रूपता तथा विराट भारतीय संस्कृति के दर्शन होते हैं।

1.3.4 सारांश :

कृष्ण भक्ति शाखा के कवियों ने सांसारिक वातावरण से दूर मन्दिरों में रहते हुए निश्चित रूप से काव्य साधना की। यह ठीक है कि मन्दिरों का वातावरण पर्याप्त दूषित हो चुका था, फिर भी दरबारी कवियों का धर्म और दर्शन से सम्बन्ध होते हुए भी उसमें कबीर और तुलसी की भांति धार्मिक प्रचार, दार्शनिक गुत्थियां एवं शुष्क उपदेशों का प्रतिपादन नहीं मिलता इसमें भावात्मकता की प्रधानता है। संगीत के माधुर्य ने उसकी सरसता में और भी अधिक अभिवृद्धि कर दी है। उसमें तत्कालीन लोक जीवन का प्रतिबिम्ब राधा कृष्ण के लौकिक जीवन में मिलता है। उसके भाव पक्ष और कला पक्ष दोनों प्रौढ़ है तथा जनता के अल्प शिक्षित व सुशिक्षित दोनों वर्ग उसका आस्वादन कर सकते है।

राम भक्ति शाखा के बहुत से कवि धार्मिक प्रवृति के व्यक्ति थे, जिन्होंने अपनी धार्मिक भावनाओं एवं अनुभूतियों की प्रेरणा से काव्य रचना की। सम्प्रदाय विशेष पर आश्रित न होने के कारण इन कवियों के दृष्टिकोण में साम्प्रदायिक संकीर्णता या कट्‌टर मतवादिता दृष्टिगोचर नहीं होती। इन्होंने धर्म के प्रति व्यापक दृष्टिकोण का परिचय दिया है तथा विभिन्न सम्प्रदायों में एकता एवं समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया है। दृष्टिगोचर की इसी व्यापकता के कारण इनके काव्य की विषय वस्तु के क्षेत्र में भी पर्याप्त व्यापकता आ गई है। राम, कृष्ण, शिव आदि से लेकर जैन सिक्ख आदि विभिन्न धर्मों के महापुरूषों को इनके काव्य में स्थान मिला है। जनता की धार्मिक चितवृति को जागृत रखने के लिए उन्होंने अवतारों, महापुरुषों एवं भक्तों के आदर्श चरित का गान श्रद्धापूर्ण शब्दों में किया है जिससे पाठकों के हृदय में सच्ची भक्ति का उद्‌बोधन होता है। इन्होंने धर्म के विभिन्न रूपों, उपासना के विभिन्न भेदों एवं भक्ति की विभिन्न पद्धतियों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत काव्य परम्परा में भावना की गंभीरता एवं विविधता तथा शैली की बहुरूपता भी दृष्टिगोचर होती है। यद्यपि इनके काव्य का मूल भाव भक्ति भाव ही है। किन्तु इनके अर्न्तगत चरित नायक की परिस्थिति के अनुरूप शृंगार, वीर, रौद्र, भयानक अद्‌भुत आदि की व्यंजना सफल रूप से हुई है।

1.3.5 शब्दावली :

शब्द		**अर्थ**
मर्मस्पर्शी	–	दिल को छूने वाला
आसक्त	–	लिप्त, लीन
उत्कृष्ट	–	श्रेष्ठ, उत्तम

लौकिक	–	सांसारिक
अलौकिक	–	विलक्षण
पद्धति	–	प्रणाली, रीति, ढंग

1.3.6 अभ्यास के लिए प्रश्न :

1. सगुण भक्ति शाखा को कितने भागों में बांटा गया है? इसकी प्रमुख विशेषताएं लिखिए।
2. राम भक्ति शाखा की विशेषताएं लिखिए।
3. कृष्ण भक्ति शाखा की विशेषताएं लिखिए।
4. राम भक्ति तथा कृष्ण भक्ति शाखाओं के प्रमुख कवियों का परिचय दीजिए।

पाठ संख्या : **1.4** | लेखिका : डॉ॰ एस॰ के॰ खुमार

शुद्ध-अशुद्ध, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, पर्यापवाची शब्द, विपरीतार्थक शब्द, अनेकार्थक शब्द

शुद्ध अशुद्ध :- वर्ण विन्यास की अभुद्धियाँ

अघात	आघात	अरम्भ	आरम्भ
अचार	आचार	अपार	आपार
अलोचना	आलोचना	अवश्यकता	आवश्यकता
उपर	ऊपर	संसारिक	सांसारिक

इ-ई सम्बन्धी अशुद्धियां

गती	गति	पत्नि	पत्नी
क्षत्र्यिा	क्षत्र्यिा	रीती	रीति
तिथी	तिथि	कपी	कपि
स्त्रिी	स्त्री	कवी	कवि
शान्ती	शान्ति	कवित्री	कवयित्री
समाधी	समाधि	उपाधी	उपाधि
परिक्षा	परीक्षा	भारतिय	भारतीय
पती	पति	हानी	हानि
अग्नी	अग्नि	बिमारी	बीमारी

उ-ऊ सम्बन्धी अशुद्धियां

साधू	साधु	हिन्दु	हिन्दू
प्रभू	प्रभु	गुरू	गुरु
दयालू	दयालु	रुप	रूप
वस्तू	वस्तु	लघू	लघु
पुज्य	पूज्य	रूपया	रुपया
आंसु	आंसू	डाकु	डाकू
सुचीयां	सूचियां	वधु	वधू
जादु	जादू		

बहुवचन में 'ई' तथा 'ऊ' की अशुद्धियां

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
रानीयां	रानियां	घोड़ीयां	घोड़ियां
डाकूओं	डाकुओं	साधूओं	साधुओं
सखीयां	सखियां	स्त्रीयां	स्त्रियां

'ए', 'ऐ' की अशुद्धियां

ऐक	एक	भाषाऐं	भाषाएं
दाइत्व	दायित्व	रचइया	रचयिता
अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
नैन	नयन	वैश्या	वेश्या
सेनिक	सैनिक	चाहिऐ	चाहिए

'ओ', 'औ' सम्बन्धी अशुद्धियां

अलोकिक	आलौकिक	क्यूं	क्यों
ओद्यौगिक	ओद्योगिक	व्योहार	व्यवहार
गोतम	गौतम	व्योपार	व्यापार
उपन्यासिक	औपन्यासिक	त्यौहार	त्योहार

'ऋ' की अशुद्धियां

आकृमण	आक्रमण	बृज	ब्रज
द्रश्य	दृश्य	वृटिश	ब्रिटिश
कि्रया	क्रिया	मात्रभूमि	मातृभूमि
तृिकोण	त्रिकोण	त्रितीय	तृतीय
म्रत्यु	मृत्यु	प्रथक	पृथक्

अनुस्वार (ं), अनुनासिक (ँ) तथा विसर्ग (:) सम्बन्धी अशुद्धियां

गरिंमा	गरिमा	संवारना	सँवारना
सोंचेंगे	सोचेंगे	अंधेरा	अँधेरा
गंवार	गँवार	अधापतन	अध:पतन
हंसमुख	हँसमुख	अन्ताकरण	अंत:करण

'न' और 'ण' की अशुद्धियां

टिप्पनी	टिप्पणी	प्रनाम	प्रणाम
श्रवन	श्रवण	मरन	मरण
प्रमान	प्रमाण	प्रान	प्राण
चरन	चरण	नारायन	नारायण
रामायन	रामायण	कल्यान	कल्याण

'ड', 'ड़' और 'ढ' 'ढ़' की अशुद्धियां

पडता	पड़ता	सोड़ा	सोडा
क्रीडा	क्रीड़ा	ढ़ेर	ढेर
पढना	पढ़ना	बढाई	बड़ाई
बूढा	बूढ़ा	मेंढ़क	मेंढक
झाडू	झाड़ू	लुड़कना	लुढ़कना

'र', 'ड़ तथा 'ल' की अशुद्धियां

घबड़ाना	घबराना	छोकड़ी	छोकरी

टोकड़ी	टोकरी	विरलाप	विलाप

'व' और 'ब' सम्बन्धी अशुद्धियां

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
दवाब	दबाव	ब्रत	व्रत
बर्ष	वर्ष	बन	वन
बिष	विष	बसन्त	वसन्त
बधू	वधू	बैदेही	वैदेही

'श', 'ष', 'स' सम्बन्धी अशुद्धियां

अमावश्य	अमावस्या	आदर्ष	आदर्श
प्रशाद	प्रसाद	नास	नाश
शाशन	शासन	विषेश	विशेष
कश्ट	कष्ट	भाशा	भाषा

'क्ष', 'छ' की अशुद्धियां

क्षात्र	छात्रा	छेत्र	क्षेत्र
नछत्र	नक्षत्र	छमा	क्षमा
छुद्र	क्षुद्र	सिच्छा	शिक्षा

'र' सम्बन्धी अशुद्धियां

आर्दश	आदर्श	प्रन्तु	परन्तु
आर्शीवाद	आशीर्वाद	प्रीक्षा	परीक्षा
कार्यकर्म	कार्यक्रम	परणाम	प्रणाम
स्मर्ण	स्मरण	प्रमात्मा	परमात्मा

'ष्ट', 'ष्ठ' सम्बन्धी अशुद्धियां

कनिष्ट	कनिष्ठ	यथेष्ठ	यथेष्ट
श्रेष्ट	श्रेष्ठ	षष्ठी	षष्टी
घनिष्ट	घनिष्ठ	नष्ठ	नष्ट
निष्टा	निष्ठा	संतुष्ठ	संतुष्ट

'य' के साथ संयोग से होने वाली अशुद्धियां

उपलक्ष	उपलक्ष्य	राधेशाम	राधेश्याम
कृप्या	कृपया	पियास	प्यास
जादा	ज्यादा	व्यक्तिक	वैयक्तिक
कियारी	क्यारी	वितीत	व्यतीत

अक्षरलोप से होने वाली अशुद्धियां

अध्या	अध्याय	ललित	लालित्य
अध्यन	अध्ययन	सप्ता	सप्ताह
द्वन्द	द्वन्द्व	स्वतंत्रा	स्वतंत्रता
पाण्डे	पाण्डेय	स्वालम्बन	स्वावलम्बन

हल चिह्न सम्बन्धी अशुद्धियां

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
जगत	जगत्	सम्राट	सम्राट्
मूल्यवान	मूल्यवान्	भगवान	भगवान्
पश्चात	पश्चात्	बुद्धिमान	बुद्धिमान्
पृथक	पृथक्	श्रीमान	श्रीमान्
नवम	नवम्	पतित्	पतित

'ज्ञ' और 'ग्य' सम्बन्धी अशुद्धियां

आग्या	आज्ञा	कृतग्य	कृतज्ञ
ग्यान	ज्ञान	ग्यापन	ज्ञापन
यग्य	यज्ञ	योज्ञ	योग
प्रतिग्या	प्रतिज्ञा	विग्यान	विज्ञान

सन्धि सम्बन्धी अशुद्धियां

अत्याधिक	अत्यधिक	अत्योक्ति	अत्युक्ति
जगननाथ	जगन्नाथ	उपरोक्त	उपर्युक्त

समास सम्बन्धी अशुद्धियां

एकलौता	इकलौता	निर्गुणी	निर्गुण
मंत्रीवर	मंत्रीवर	माताभक्ति	मातृभक्ति

प्रत्यय सम्बन्धी अशुद्धियां

ऐक्यता	ऐकय	एकत्रि	एकत्रित
महता	महत्ता	उत्कर्षता	उत्कर्ष

वाक्य रचना

वाक्य रचना के लिए सबसे उपयोगी बात शुद्ध और सार्थक शब्दों का मेल है। शब्दों का अन्वय जान लेने पर उसके अर्थ आसानी से समझ में आ सकते हैं। लिंग, वचन, पुरुष काल आदि के अनुसार शब्दों का आपस में जो सम्बन्ध रहता है उसे अन्वय या मेल कहते हैं। जैसे 'राम पढ़ता है।' इस वाक्य में 'पढ़ना' क्रिया-कर्त्ता का मेल, कारक का क्रम, संज्ञा, सर्वनाम का मेल और विशेषण-विशेष्य का मेल विशेष ध्यान देने योग्य है क्योंकि हिन्दी में क्रिया का कर्त्ता और कर्म के साथ संज्ञा का सर्वनाम के साथ सम्बन्ध कारक या सम्बन्धी के साथ और विशेषण का विशेष्य के साथ मेल होता है। इसके विषय से असावधान रहने से अशुद्धि हो सकती है।

शुद्ध शब्दों के ज्ञान के उपरान्त हम यहां कुछ वाक्यों को दे रहे हैं। उनके शुद्ध रूप भी साथ दे दिए गए हैं।

अशुद्ध वाक्य	शुद्ध वाक्य
(1) इस यन्त्र की उत्पत्ति सर विलियम ने की।	इस यन्त्र का आविष्कार सर विलियम ने किया
(2) वह आगामी वर्ष हरिद्वार गया।	वह गत वर्ष हरिद्वार गया।
(3) सरलता साधु का प्रमुख चिह्न है।	सरलता साधु का प्रमुख गुण है।
(4) मेरा रमेश के साथ घोर सम्बन्ध रहा है।	मेरा रमेश के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है।

(5) *दूध में कौन गिर गया ?*	*दूध में क्या पड़ गया ?*
(6) *उसकी सींगे नहीं थी।*	*उनके सींग नहीं थे।*
(7) *उसकी एक आँख कानी थी।*	*वे काने थे।*
(8) *उसका प्राण निकल गया।*	*उनके प्राण निकल गए।*
(9) *कृप्या से मेरा नाम भी लिख लें*	*कृपया मेरा नाम भी लिख लें।*
(10) *बापू की मृत्यु का मुझे बड़ा कष्ट हुआ।*	*बापू की मृत्यु पर मुझे बड़ा शोक हुआ।*

मुहावरे और लोकोक्तियां

हिन्दी भाषा के मुहावरे, अर्थ तथा उनका प्रयोग

(1) *अंगारे उगलना : क्रोध से कठोर वचन कहना।*
उस अबोध बालक पर क्यों अंगारे उगल रहे हो भाई। उसमें उसका ज़रा भी दोष नहीं है।

(2) *अन्धे की लकड़ी : एक मात्र सहारा।*
उस दीन हीन बुढ़िया के युवा पुत्र की मृत्यु क्या हुई मानों परमात्मा ने अन्धे की लकड़ी छीन ली।

(3) *अंग अंग मुस्काना : अत्यधिक प्रसन्न होना।*
अपने मित्र के विवाह का समाचार सुनकर उसका अंग-अंग मुस्काने लगा।

(4) *अपना उल्लू सीधा करना : स्वार्थ सिद्ध करना।*
ग्राहक को लाभ हो या हानि दलाल तो अपना उल्लू सीधा करना ही जानता है।

(5) *ईंट से ईंट बजाना : नष्ट भ्रष्ट कर देना*
मुगल साम्राज्य औरंगजेब के अत्याचारों से पीड़ित जनता को देखकर शिवाजी ने निश्चय किया कि मैं इस साम्राज्य की ईंट से ईंट बजाकर रहूंगा।

(6) *अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारना : अपनी हानि स्वयं करना*
हैजे के दिनों में खाने-पीने पर संयम न रखना अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारना है।

(7) *अंगूठा दिखाना : साफ जवाब देना।*
आप पर मुझे बड़ा विश्वास थ, पर अवसर आते ही आप ने भी अंगूठा दिखा दिया।

(8) *आंख फेर लेना : अपना काम निकाल कर बदल जाना।*
विपत्ति पड़ते ही स्वार्थी मित्र आंखें फेर लेते हैं।

(9) *आंखे बिछाना : प्रेम से स्वागत करना।*
भारत में आज भी कितने ही लोग श्री सुभाष चन्द्र बोस के लौटने की प्रतीक्षा में आंखें बिछाए बैठे हैं।

(10) *आंखों का कांटा होना : आंखों में खटकना*
पृथ्वीराज चौहान सदा जयचन्द की आंखों में कांटा बना रहा।

(11) *आंखों में धूल झोंकना : धोखा देना।*
कुछ दुकानदार ग्राहकों की आंखों में धूल झोंकने में ही अत्याधिक निपुणता समझते हैं।

(12) *आकाश पाताल का अन्तर : बहुत अधिक अन्तर।*
इन दोनों कवियों की कविताओं में आकाश पाताल का अन्तर दिखाई देता है।

(13) *आटे दाल का भाव मालूम होना : कठिनाइयों का अनुभव होना।*

मेरी आयु में आओगे तो लाला सारे पापड़ बेलने पड़ेंगे और तब आटे दाल का भाव मालूम होगा।

(14) *आकाश से बातें करना : अधिक ऊंचा होना।*
पहाड़ों पर ऊंचे चीड़ के वृक्ष मानों आकाश से बातें कर रहे हैं।

(15) *आस्तीन का सांप : विश्वासघाती व्यक्ति।*
जो व्यक्ति आस्तीन का सांप बनकर शत्रु-देश की अन्दर ही अन्दर सहायता करते हैं वे देश के लिए सबसे अधिक खतरनाक है।

(16) *आसमान सिर पर उठाना : बहुत शोर मचाना।*
बात कुछ भी नहीं थी तुमने वैसे ही आसमान सिर पर उठा लिया है।

(17) *उंगली उठाना : दोषारोपण करना।*
कोई ऐसा कान न करो कि समाज तुम पर उंगली उठाए।

(18) *उंगली पर नचाना : वश में करना।*
बाबू राम प्रकाश की आजकल दफतर में खूब चलती है और वह बड़ साहिब को भी उंगलियों पर नचाता है।

(19) *उल्टी गंगा बहना : उल्टे कार्य करना।*
बड़े होकर भी आप मेरा अधिक सम्मान कर रहे हैं। यह उल्टी गंगा बहाना नहीं तो और क्या है।

(20) *कफन सिर से बांधना : मरने के लिए तैयार रहना।*
देश-भक्त कफन सिर से बांधकर सदा निडर घूमते हैं।

(21) *कमर टूटना : निराश होना।*
अपने एकमात्र पुत्र का चौथी बार दसवीं की परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने का समाचार सुनकर उसके पिता जी की जैसे कमर टूट गई हो।

(22) *कान भरना : चुगली करना।*
कुछ लोगों की यह आदत होती है कि वे सदा दूसरों के कान भरने में लगे रहते हैं।

(23) *काम आना : युद्ध में मारा जाना।*
भारत-पाकिस्तान युद्ध में कितने वीर सैनिक काम आए, यह कौन बता सकता है।

(24) *खाला जी का घर : आसान काम।*
इस प्रश्न को हल करना खाला जी का घर नहीं।

(25) *खाक छानना : मारे-मारे फिरना।*
वह गरीब दफ्तरों की खाक छानता फिरता है, अभी तक उसे कोई नौकरी नहीं मिली।

(26) *गागर में सागर भरना : थोड़े में बहुत कर दिखाना।*
विद्वान् व्यक्ति अपनी बातों द्वारा गागर में सागर भर देते हैं।

(27) *गिरगिट की तरह रंग बदलना : एक बात पर स्थिर न रहना।*
भाई मोहन की क्या बात है, वह तो गिरगिट की तरह रंग बदलता है, कल सन्यासी था और आज गृहस्थी बन गया है।

(28) *गूंगे का गुड़ : जो बताया न जा सके।*
परमात्मा का ध्यान भक्तों के लिए सदा गूंगे का गुड़ ही बना रहता है।

(29) *घाट-घाट का पानी पीना : प्रत्येक स्थान का अनुभव प्राप्त करना।*
अरे उसकी क्या बात ! उसने तो घाट-धाट का पानी पिया है, अतः वह सहज में ही तुम्हारी बातों में आना वाला नहीं।

(30) *घाव पर नमक छिड़कना : पीड़ित को और भी सताना।*
घाव पर नमक छिड़कना भले आदमियों का काम नहीं।

(31) *घी के दीय जलाना : खुशी मनाना*
औलम्पिक खेलों में भारत के हाकी में स्वर्ण पदक जीत लाने पर देश भर में घी के दीये जलाए गए।

(32) *चादर से बाहर पैर निकालना : सामर्थ्य से अधिक खर्च करना।*
कोरी शान में आकर चादर से बाहर पैर निकालने से घर बिखर जाता है।

(33) *चेहरे पर हवाइयां उड़ना : भयभीत होना।*
राम को धनुष उठाते देख रावण के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगी।

(34) *छठी का दूध याद आना : भारी संकट पड़ना।*
राणा प्रताप की सेना का सामना होते ही अकबर की सेना को छठी का दूध याद आ गया।

(35) *छाती पर मूंग दलना : दिल दुखाना।*
नालायक बेटा सदा अपने पिता की छाती पर मूंग दलता है।

(36) *टांग अड़ाना : दखल देना।*
उसे दूसरों की बातों में टांग अड़ाने की आदत पड़ गई है।

(37) *पगड़ी उछालना : अपमानित करना।*
कुछ व्यक्तियों को बड़ों की पगड़ी उछालने में अधिक आनन्द का अनुभव होता है।

(38) *डींग मारना : शान मारना*
कल तो तुम चोर का नाम सुन कर भाग गए, आज अपनी वीरता की डींग मार रहे हो।

(39) *दांत खट्टे करना : पराजित करना।*
भारत-पाक युद्ध में भारतीय जवानों ने पाकिस्तानी किराये के टटूओं के दांत खट्टे कर दिए।

(40) *दांतों तले उंगली दबाना : आश्चर्य होना*
छोटे बालक की अनुपम वीरता देखकर सब दांतों तले उंगली दबाने लगे।

(41) *नाक में दम करना : खूब तंग करना।*
उसने मेरे नाक में दम कर रखा है।

(42) *पांचों उंगलियां घी में होना : अत्यन्त लाभ होना।*
भाव बढ़ जाने से व्यापारियों की पांचों उंगलियां घी में हो गई।

(43) *पीठ दिखाना : पराजित होना।*
वीर सैनिक युद्ध में पीठ दिखाने से तो मृत्यु को अच्छा समझते हैं।

(44) *पेट में चूहे दौड़ना : बहुत भूख लगना।*
हमारे तो पेट में चूहे दौड़ रहे हैं और तुम ज्ञान चर्चा में हमें उलझाना चाहते हो।

(45) *मुंह में पानी आना : जी ललचाना।*
अंगूरों के लटकते गुच्छे देखकर लोमड़ी के मुंह में पानी भर आया।

(46) *भीगी बिल्ली बनना : डर से दुबक जाना।*
मास्टर साहिब को देखते ही वह भीगी बिल्ली बन गया।

(47) *लकीर का फकीर होना : रीति रिवाजों पर दृढ़ रहना।*
आधुनिक युग में लकीर का फकीर बनने से काम नहीं चलता।

(48) *हाथ पर हाथ धर कर बैठ जाना : खाली या निकम्मे बैठे रहना।*
हाथ पर हाथ धर कर बैठे रहने से काम नहीं चलेगा, कुछ तो उद्यम करो।

(49) *हाथ बटांना : काम में सहायता करना।*
आवश्यकता पड़ने पर दूसरे के कामों में हाथ बटांना एक सद्गुण है।

(50) *लाल-पीला हानो : क्रोध करना।*
अब लाल-पीला होना व्यर्थ है, काम पहले से ही सोच-विचार कर करना चाहिए।

मुहावरों और लोकोक्तियों में अन्तर

(1) *मुहावरा काल, वचन और पुरुष के आधार पर बदल जाता है, किन्तु लोकोक्ति का प्रयोग वैसा ही रहता है, इसका रूप परिवर्तित नहीं होता।*

(2) *मुहावरा स्वतंत्र वाक्य कभी भी नहीं बनता है, वह वाक्य में पूर्ण रूप से घुलमिल जाता है, जबकि लोकोक्ति का अधिकांश प्रयोग स्वतंत्र रूप मे ही किया जाता है। कभी-कभी विशेषण के रूप में भी इसका प्रयोग कर लिया जाता है।*

व्यवहार में आने वाली लोकोक्तियां वर्ग और क्रम के अनुसार नीचे दी जा रही है –

(1) *अधजल गगरी छलकत जाए : जब सभा आदि में कम योग्यता वाला व्यक्ति अधिक बोले।*
इस विचार गोष्ठी में विद्वान् लोग तो चुप बैठे रहे किन्तु मैट्रिक पास निरर्थक टांय-टांय करता रहा, ठीक ही ऐसे वाचालों के लिए कहा जाता है कि अधजल गगरी छलकत जाए।

(2) *अन्धों में काना राजा : निरक्षकों में कम पढ़ा लिखा व्यक्ति भी सम्मान प्राप्त कर सकता है। मोहन को छोड, इस गांव की पंचायत के अन्य पंच तो हस्ताक्षर भी नहीं कर सकते, इसलिए मिडल फेल मोहन को सरपंच बनाना पड़ा और करते भी क्या, अन्धों में काना राजा ही तो होता है।*

(3) *अन्धा क्या चाहे दो आंखें : इच्छित वस्तु का बिना प्रयास किए मिल जाना।*
रवि को बहुत प्यास लगी, अनीता ने कहा - भैया ! शर्बत पीओगे ? वह बोला – 'अंधा क्या चाहे दो आंखें' पिला दो।

(4) *आंखों के अन्धे नाम नयनसुख : गुण के विरुद्ध नाम होना।*
अरे उस करोड़ीमल में तो भिखारी को एक पैसा देने की सामर्थ्य नहीं वह तो स्वयं पैसे-पैसे का मोहताज है। वह तो केवल नाम का करोड़ीमल है ऐसे लोगों के विषय में ही तो कहा जाता है, आंखों के अन्धे नाम नयनसुख।

(5) *आग कुआं पीछे खाई : जब दोनों ओर ही संकट हो।*
पता चला है कि दूल्हे की पहली पत्नी जीवित है। अब यदि बारात लौटाते हैं तो बदनामी होती है और लड़की का विवाह करते हैं तो उसका जीवन नष्ट होता है। अरे भाई बड़ी दुविधा में पड़े हैं, हमारे लिए तो आगे कुआं पीछे खाई है।

(6) *इन तिलों में तेल नहीं : व्यक्ति जो किसी का कार्य सिद्ध न कर सके।*
कई दिनों तक मैं उस कंजूस सेठ की सेवा में व्यर्थ ही जुटा रहा, पर अब मैंने जांच लिया है कि इन तिलों में तेल नहीं और मेरी अभिलाषा पूरी न होगी।

(7) *ईश्वर की माया कहीं धूप कहीं छाया : भाग्य का बराबर न होना।*
मेरे पड़ोस में रामलाल के धर उसके पुत्र के विवाह की धूमधाम मची हुई थी और दूसरी ओर हरि के पुत्र

की अचानक मृत्यु से रोना पीटना हो रहा था। संसार बड़ा विचित्र है, कोई क्या करे, ईश्वर की माया कहीं धूप, कहीं छाया।

(8) *उल्टा चोर कोतवाल को डांटे : दोष न मानना।*
प्राध्यापक ने छात्र से कहा – हमारे महाविद्यालय का विद्यार्थी पंजाबी विश्वविद्यालय में प्रथम आया है और तुम अपनी लापरवाही से फेल होकर कहते हो कि इस महाविद्यालय के अध्यापक पढ़ाते नहीं। वाह भई वाह! यह तो उल्टा चोर कोतवाल को डांटने वाली बात हुई।

(9) *ऊंची दुकान फीका पकवान : नाम बड़े और दर्शन छोटे।*
सरकारी अस्पताल की बढ़िया इमारत और ढेर सारे डॉक्टरों पर फूले बैठना। यहां रोगी के इलाज की किसी को चिन्ता नहीं, यहां तो ऊंची दुकान फीका पकवान वाली बात है।

(10) *एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकती : जहां दो व्यक्ति विरोध के कारण एक स्थान पर न रह सकें।*
राम लाल पक्का नास्तिक है और कृष्ण पक्का आस्तिक। वे दोनों एक ही संस्था के सदस्य नहीं रह सकते। दोनों की विचारधारा में बड़ा ही विरोध है। यदि संस्था को ठीक ढंगसे चलाना है तो एक की सदस्यता समाप्त करनी पड़ेगी क्योंकि एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकती।

(11) *ओखली में सिर दिया तो मूसलों से क्या डर : किसी कठिन काम को करने का निश्चय कर लिया तो विपत्तियों का कैसा भय।*
अब अनाथालय बनाने के लिए लोगों से दो लाख रुपया इकट्ठा करने का प्रण ले ही लिया अब मांगते समय लोगों क आक्षेपों से क्या घबराना ? जब ओखली में सिर डाल ही दिया तो मूसलों से क्या डर ?

(12) *काजल की कोठरी में कैसो ही सियानों जाए एक लीक काजल की लागी है, पे लागी है – किसी बुराई का प्रभाव अवश्य होता है।*
यह माना की तुम शराब नहीं पीते हो, राम जैसे शराबी की संगति करने से धीरे-धीरे तुम भी इसका सेवन करने लग जाओगे। कितना ही बचो लेकिन काजल की कोठरी में कैसो ही सयानों जाय एक लीक काजल की लागी है, पे लागी है।

(13) *खोदा पहाड़ निकला चूहा : शोर अधिक, वास्तविकता कम।*
राघव ने बम्बई से यहां आकर अपनी शान का ढिंढ़ोरा खूब पीटा किन्तु मुझे अब अचानक वहां जाकर देखने का अवसर मिला तो खोदा पहाड़ निकला चूहा वाली बात हुई।

(14) *गागर में सागर भरना : थोड़े में बहुत बड़ी बात कह देना।*
महाकवि बिहारी ने दोहे लिख कर गागर में सागर भर दिया है। एक दोहे की व्याख्या में अनेकों पृष्ठ लिखने पर भी हम दोहे के भाव पूर्णतया स्पष्ट नहीं कर पाते।

(15) *घर की मुर्गी दाल बराबर : घर की कीमती वस्तु भी सस्ती है।*
कीर्तन मंडली के लिए रामधन ने पांच टन चावल दान किए, करें भी क्यों न, उसकी बड़ी ज़मीन है। उसके लिए तो चावल देना घर की मुर्गी दाल बराबर होगा।

(16) *चोर की दाढ़ी में तिनका : दोषी व्यक्ति को उसका दोष डराता है।*
कृष्ण ने मेरी पुस्तक चुराई थी। जब मैंने उससे सरसरी रूप में पूछा कि क्या उसने मेरी पुस्तक देखी है, तो वह खिसिया गया। उसका खिसियाना ठीक ही था क्योंकि चोर की दाढ़ी में तिनका जो होता है।

(17) *छोटा मुंह बड़ी बात : अपनी आयु से बढ़-चढ़ कर बात कहना।*
तुम अपने पिता जी की बराबरी करते हो, तुम्हें छोटा मुंह बड़ी बात करते शर्म नहीं आती। चल उनसे क्षमा

मांग।

(18) *जल में रहकर मगर से बैर : जिसके आसरे रहना उसी का विरोध करना।*
सेठ जी की मिल में नौकरी करते हो और उन्हीं के विरुद्ध बातें करते हो। यहां तुम अधिक देर नहीं टिक सकोगे। जल में रहकर मगर से बैर कैसे सम्भव हो सकता है।

(19) *डूबते को तिनके का सहारा : बेसहारा मनुष्य को थोड़ा सा सहारा बहुत होता है।*
बाढ़ पीड़ितों को यदि लोग सिर छुपाने के लिए थोड़ा सा स्थान ही दे दें तो उनका धैर्य बन्ध जाएगा। डूबते को तिनके का सहारा बहुत होता है।

(20) *तेते पांव पसारिये जेते लम्बी डोर : अपनी पहुंच के अनुसार ही काम करना चाहिए।*
मैट्रिक मे कम अंक लेकर पास हुए हो। अब कॉलिज में मैडिकल लेना चाहते हो, मैडिकल की पढ़ाई तुमसे नहीं चलेगी। यदि पास होना है तो विज्ञान का पीछा छोड़ दो। तुम्हें तो चाहिए तेते पांव पसारिये जेती लम्बी डोर।

(21) *दीवारों के भी कान होते हैं : रहस्य छिपे नहीं रहते।*
तुमने यदि शिकायत करनी हो तो धीरे बोलना ऐसा न हो कि शत्रु को पता चल जाए। सावधानी से काम लेना क्योंकि दीवारों के भी कान होते हैं।

(22) *नौ नकद न तेरह उधार : व्यापार में अधिक उधार अच्छा नहीं होता।*
यदि कोई वस्तु लेनी हो तो नकद दाम देकर लो। उधार से व्यक्ति का सम्मान जाता रहता है। यदि सम्मानपूर्वक संसार में जीना चाहते हो तो नौ नकद न तेरह उधार के सिद्धान्त को पल्ले बांध लो, कोई भी उंगली नहीं उठा सकता।

(23) *बगल में छूरी मुंह में राम-राम : दिल में कुछ बाहर से कुछ।*
तुम्हें उसका विश्वास नहीं करना चाहिए। उसकी मित्रता एक छल-प्रपंच है। वास्तव में तुम्हारे प्रति उसकी भावना बगल में छूरी मुंह में राम-राम वाली है।

(24) *मन के लड्डूओं से भूख नहीं मिटती : केवल विचारों के काम नहीं चलता।*
शेख चिल्ली की तरह हवाई किले बनाने से कुछ नहीं बनेगा। कुछ करके दिखाओ तो मानें, केवल मन के लड्डूओं से भूख नहीं मिटती।

(25) *यथा राजा तथा प्रजा : जैसा स्वामी वैसा ही नौकर।*
जब मैनेजर साहिब ही बैंक देर से आते हैं तो कर्मचारी समय पर कैसे आएं ? ठीक ही कहा है यथा राजा तथा प्रजा।

(26) *हाथ कंगन को आरसी क्या : जब घटना प्रत्यक्ष हो तब प्रमाण की आवश्यकता ही नहीं है।*
प्राध्यापक ने सुरेश से कहा कि वह कक्षा से बाहर चला जाए उसने शरारत की है, किन्तु सुरेश के अनुसार उसने कोई शरारत नहीं की। परन्तु अध्यापक ने कहा प्रमाण की आवश्यकता नहीं, हाथ कंगन को आरसी क्या।

पर्यायवाची शब्द :

अग्नि – आग, पावक, अनल, बह्नि, कृशानु, हुताशान
अमृत – सुधा, अमी, पीयूष, सुरभोग।
अधर – ओष्ठ, ओंठ, रदनछंद, रदछन।
आंख – लोचन, नयन, नेत्र, चक्षु, दृग, अक्षि, अखियां, नैन।
इन्द्र – सुरेश, शचीपति, वासव, पुरन्दर, देवराज, सुरवर, सुरपति।
कमल – पंकल, सरोज, पद्म, नलिन, अरविन्द, शतदल, पुण्डरीक।

कान – कर्ण, श्रौत्र, श्रवणेन्द्रिय।
कामदेव – मदन, कुसुमशर, रतिपति, कुसुमायुद्ध, मीनकेतन।
अनार – दाड़िम, शुर्कीप्रिच, शुकोदम, रामबीज।
अनुपम – अनूप, अनोखा, अपूर्ण, अद्भुत, अनूठा, अद्वितीय, अतुल।
अन्न – अनाज, शस्य, धान्य।
अपमान – तिरस्कार, अनादर, अवमान, अवज्ञा।
अरण्य – कानन, जंगल, विपिन, वन।
अर्थ – धन, द्रव्य, मुद्रा, वित्त, लक्ष्मी, दौलत।
असुर – निशाचर, रजनीचर, राक्षस, दानव, दनुज, दैत्य।
अहंकार – घमण्ड, अभिमान, दर्प, दम्भ।
आकाश – आसमान, अन्तरिक्ष, अम्बर, नभ, गगन।
आज्ञा – निर्देश, आदेश, हुक्म।
आत्मा – क्षेत्रज्ञ, चैतन्य, जीव, देव।
आनन्द – हर्ष, मोद, प्रसन्नता, आह्लाद, प्रसाद, उल्लास, सुख।
आभूषण – आभरण, भूषण, अलंकार, गहना, भण्डन।
आंख – चक्षु, नेत्र, नयन, लोचन, दृग, विलोचन।
इच्छा – चाह, कामना, मनोरथ, आकांक्षा, लिप्सा, अभिलाषा, लालसा।
ईश – प्रभु, परमेश्वर, हरि, ईश्वर, स्वामी, परमात्मा, जगदीश, परब्रह्म, अन्तर्यामी।
उदय – उन्नति, आरोहण, प्रकट होना, चढ़ना, उद्‌गमन।
उद्दण्ड – दुष्ट, उच्छृंखल, अविनीत।
उदार – उच्चाशय, महान्, असंकीर्ण, दानशील।
उन्नति – उत्थान, उत्कर्ष, विकास, अभ्युदय।
उपवन – बाग, बगीचा, वाटिका, उद्यान, आराम।
ऊंट – उष्ट्र, क्रमेलक।
ऋषि – महामुनि, सन्त, मन्त्र द्रष्टा।
एकता – एका संगठन, मेल, मिलाप, ऐक्य।
औष्ठ – ओठ, होंठ, अधर।
और – अन्य, दूसरा, भिन्न, तथा, एवं।
अन्ध – अन्धा, नेत्रहीन, चक्षु रहित, सूरदास।
कपट – छल, धोखा, धोखेबाजी, वंचना।
कपड़ा – वसन, वस्त्र, चीर, दुकूल, अम्बर, पट।
कोयल – कोकिला, पिक, वसन्तदूत, परभूत, काकपालो।
गणेश – गजानन, गिरिजानन्दन, विनायक, एकदन्त, गणाधिप।
गंगा – सुरसरि, भागीरथी, त्रिपथगा, विष्णुपदा।
घर – गृह, सदन, गह, निकेतन, वास, अवास, भवन, शाला।
घन – बादल, जलधर, पयोद, मेघ, वारिद, जलद।
चन्द्रमा – इन्दु, शशि, शशधर, तारापति, चन्द्र, हिमांशु, सुधाकर।

तलवार	–	करवाल, कृपण, चन्द्रहास, खंग, खंजर, तेग़, शमशीर।
तालाब	–	जलाशय, पुष्कर, पोखर, सर, सरसी, सरोवर।
जल	–	अंबु, अंभ, अप, अमृत, नीर, पानी, सलिल, पय, उवक।
तोता	–	शुक, कीट, सुरगा, दाडिमप्रिथ, सुअटा, सुआ, रक्ततुंड।
दांत	–	दंत, दंतुकी, दशन, द्विज, रदन, रद।
दिन	–	दिवस, वासर, वार, नहन।
नदी	–	सरित, तरंगनी, कल्लोलिनी, तरंगवती, सरि, तटनि।
पत्थर	–	पाषाण, उपल, पाइन, प्रस्तर, शिला, अश्म।
पर्वत	–	अचल, गिरि, नग, शैल, भूमिधर।
पवन	–	वायु, अनिल, समीर, अग्नमित्र, हवा, मारुत।
पक्षी	–	खग, विहंग, विहंगम, नभचर, द्विज, शकुनि।
पुरुष	–	मानुष, नर, मनुज, जन, मनुष्य।
पुष्प	–	फूल, कुसुम, पुहुप, सुमन, प्रसून, फुल्ल।
पृथ्वी	–	भूमि, धरा, मही, धरणी, उर्वी, धरती, वसुन्धरा, वसुधा।
बन्दर	–	वानर, कपि, मर्कट, हरि, शाखामृग।
बाग	–	उद्यान, वाटिका, उपवन, बगीचा, फुलवारी, बगिया, बाड़ी।
बिजली	–	चपला, विद्युत, तड़ित, सौदामिनी, चंचला।
ब्रह्म	–	चतुरानन, स्वयंभू, प्रजापति, विधाता, लोकपिता, लोकनाथ।
शत्रु	–	अमित्र, प्रतिपक्षी, वैरी, द्वेषी, विपक्षी, रिपु।
समुद्र	–	सागर, रत्नाकर, सिन्धु, उदधि, परावार, तोयनिधि।
सर्प	–	अहि, भुजंग, विषधर, फणी, व्याल, नाग, सांप।
सरस्वती	–	भारती, हंसवाहिनी, वीणावादिनी, शारदा, बागीश्वरी।
सिंह	–	पंचानन, केहर, मृगराज, मृगेन्द्र, शेर, केसरी।
सूर्य	–	रवि, दिनकर, सविता, आदित्य, भानु, भास्कर, दिवाकर।
सोना	–	स्वर्ण, कनक, हेम कंचन, हाटक।
स्त्री	–	नारी, वनिता, अबला, कामिनी, ललना, रमण, पत्नी, वामा।
सेवक	–	अनुचर, दास, किंकर, भृत्य, चाकर, नौकर।
हाथी	–	गज, कुंजर, दन्ती, करी, हस्ती, सिधुर, मंतग, गंयद।
हनुमान	–	पवन कुमार, पवन सुत, मरुतपुत्र, महावीर, अंजनासुत, रामदूत।
हृदय	–	उर, हिय, अन्ताकरण, दिल, हिया, जी, मन।
भौरा	–	अलि, भृग षट्पद, मधुकर, चचरीक, मधुप, भ्रमर।
मदिरा	–	सुरा, वारुणी, हाला, मधु, दारू, शराब, आसव।
महेश	–	शंकर, आशुतोष, शम्भू, रुद्र, उमापति, प्रलयंकर, महादेव।
यमुना	–	कालिन्दी, सूर्यसुता, कृष्ण, रवितनया, भानुजा, हंससुता, जुमना।
राजा	–	भूपति, नरेन्द्र, नरेश, महीश, महीपाल, सम्राट, नृप, भूप।
रात	–	रात्रि, निशा, यामिनी, रजनी, क्षपा, शबरी, विभावरी।
लक्ष्मी	–	श्री, चपला, कमला, रमा, सिन्धुसुता।

वृक्ष – पादप, तरु, द्रुप, पेड़, विटप, शाखी।
शरीर – काया, तनु, गात, देह, कलेवर।
मित्र – सहचर, संगी, साथी, सुहृदय, वयस्य, सखा।
मूर्ख – अबोध-जड़, अज्ञ, बुद्धिहीन, मूढ़, बेवकूफ।
मैला – मलीन, म्लान, गंदा, अस्वच्छ, अपवित्र, अशुचि।
मोल – मूल्य, अर्थ, दाम, कीमत।
मोक्ष – मुक्ति, निर्वाण, परमधाम, परमगति, परमपद।
यम – यमराज, धर्मराज, शमन, सूर्यपुत्र, यमुनाभ्राता, कृतान्त।
लक्षण – चिह्न, लच्छन, निशान, पहचान के कारण।
लहर – तरंत, वीचि, ऊर्मि, लहरी।
वर्ष – वत्सर, शब्द, बरस, साल।
वर्षा – पावस, मेह, बारिश।
वात्सल्य – स्नेह, लाड-प्यार, लालन, शिशु, प्रेम।
विष्णु – जनार्दन, चक्रपाणि, गोविन्द, चतुर्भुज, हरि, नारायण, दामोदर, उपेन्द्र, मुकुन्द, मधुरिपु, माधव, लक्ष्मीपति।
शिखर – चोटी, वेणी, सीमन्त, गुत्र।
शिव – महादेव।
संसार – संसृति, सृष्टि, जगत, विश्व, लोक, दुनिया।
सन्तति – सन्तान, प्रजा, प्रकृति, अपत्य।
स्वर्ग – परमधाम, सुरलोक, स्वलोक, देवलोक, दिव।
समूह – झुण्ड, जत्था, टोली, मण्डली, यूथ, दल, समुदाय, वृन्द, गण, पुंज, संघ, समुच्चय, जुट्ट।

विपरीतार्थक शब्द

विपरीतार्थक या विरुद्धार्थक शब्दों के ज्ञान से हमें परस्पर विरुद्ध भावों तथा पदार्थों का ज्ञान होता है और इससे विचार करने में या वाद-विवाद में उन शब्दों का प्रयोग करने में सफलता प्राप्त होती है। विपरीतार्थक शब्दों का प्रयोग प्रायः साथ भी होता है। जैसे – सुख-दुःख, दिन-रात आदि। प्रमुख विपरीतार्थक शब्द निम्नलिखित है –

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
अथ	इति	आदर	निरादर
अनुकूल	प्रतिकूल	आदान	प्रदान
अनुज	अग्रज	आदि	अन्त
अनुरक्त	विरक्त	अभ्यन्तर	बाह्य
अधिक, प्रचुर	अल्प, न्यून	आयात	निर्यात
अपना	पराया	आर्य	अनार्य
अपेक्षा	उपेक्षा	आरोह	अवरोह
अस्त	उदय	आशा	निराशा
अन्धकार	प्रकाश	आगामी	गत
अनन्त	सान्त	आस्था	अनास्था
अर्थ	अनर्थ	आस्तिक	नास्तिक

अभिज्ञ	अनभिज्ञ	आरम्भ	अन्त
अमृत	विष	इष्ट	अनिष्ट
अन्त	आदि	इहलोक	परलोक
अनिवार्य	ऐच्छिक	उऋण	ऋणी
अपराधी	निरपराध	उग्र	शान्त
अल्प	अधिक	उचित	अनुचित
अल्पज्ञ	बहुज्ञ	उत्कर्ष	अपकर्ष
आकाश	पाताल	चेतन	जड़, अचेतन
आगमन	गमन	चेतना	मूर्च्छा
इति	अथ	कृतज्ञ	कृतघ्न
उत्थान	पतन	कृत्रिम	स्वाभाविक
उदय	अस्त	क्रय	विक्रय
उदार	अनुदार	क्रिया	प्रतिक्रिया
उद्दण्ड	विनीत	कुरूप	सुन्दर
उद्यम	आलस्य	कुकर्म	सुकर्म
उन्नत	अवनत	कोमल	कठोर
उन्नति	अवनति	कंचन	माटी
उपकार	अपकार	क्षत	अक्षत
उपत्यका	अधित्यका	क्रोधी	शान्त
उपचय	अपचय	श्रुत	अश्रुत
उपस्थित	अनुपस्थित	क्षुद्र	महान्
उर्वर	अनुर्वर	खल	सज्जन
उष्ण	शीत	खुला	बन्द
ऊंच	नीच	गत	आगत
ऋजु	कुटिल	गमन	आगमन
ऐच्छिक	अनिवार्य	गरल	अमृत
ऐश्वर्य	दारिद्रय	गहरा	उथला
औपचारिक	अनौपचारिक	गाढ़	पतला
कनिष्ठ	ज्येष्ठ	ग्राह्य	अग्राह्य
कर्म	अकर्म	गुण	दोष
कल्पना	यथार्थ	गुरु	लघु, शिष्य
कीर्ति	अपकीर्ति	दानी	कृपण
गौण	मुख्य	दास	स्वामी
गौरव	लाघव	धनी	निर्धन
चर	अचर	धर्म	अधर्म
चंचल	स्थिर	धीर	अधीर
चिर	शीघ्र	धैर्य	अधैर्य

छल	निश्छल	नख	शिख
जटिल	सरल	नत	उन्नत
जड़	चेतन	नवीन	प्राचीन
जय	पराजय	नश्वर	अनश्वर
जरा	यौवन	नागरिक	ग्रामीण
जल	थल	निन्दा	स्तुति
जंगम	स्थावर	निर्गुण	सगुण
जीवन	मरण	निद्रा	अनिद्रा
ज्ञान	अज्ञान	निकट	दूर
ज्वार	शैथिल्य	निरक्षर	साक्षर
तटस्थ	पक्षपाती	निर्यात	आयात
तीक्ष्ण	कुंठित	निरपेक्ष	सापेक्ष
तीव्र	मन्द	निरभिमानी	अभिमानी
त्यागी	लोभी	नूतन	पुरातन
दयालु	निर्दय	पक्ष	विपक्ष
प्रसन्न	अप्रसन्न	पण्डित	मूर्ख
पश्चात्	पूर्व	प्रतिव्रता	कुलटा
पाप	पुण्य	पराधीनता	स्वाधीनता
पाश्चात्य	पूर्वीय	परमार्थ	स्वार्थ
पुण्यात्मा	पापात्मा	प्रत्यक्ष	अप्रत्यक्ष
पुरातन	नूतन	मितव्ययता	अपव्यय
पूर्ण	अपूर्ण	मित्र	शत्रु
प्रकाश	अन्धकार	मिथ्या	सत्य
प्रत्यक्ष	परोक्ष	मुख्य	गौण
प्रवृत्ति	निवृत्ति	मृदु	कठोर
प्रश्न	उत्तर	मौखिक	लिखित
प्रसाद	विषाद	यश	अपयश
फूल	कांटा	युगपद्	क्रमशः
थोड़ा	बहुत	युद्ध	शान्ति
भाग्य	दुर्भाग्य	योगी	भोगी
भाव	अभाव	योग्य	अयोग्य
भावी	अतीत	युक्त	अयुक्त
भय	निर्भय	शूरवीर	कायर
भीषण	सौम्य	शोक	हर्ष
भूत	वर्तमान	श्लाघा	निन्दा
भूषण	दूषण	श्रद्धा	अश्रद्धा
मनुज	दनुज	रक्षक	भक्षक

मान	अपमान	रचनात्मक	ध्वंसात्मक
मानव	दानव	रति	विरति
मान्य	अमान्य	राग	द्वेष
मित	अमित	राजा	रंक
लोक	परलोक	रुग्ण	स्वस्थ
वरदान	शाप	लघु	गुरु
व्यय	आय	लाघव	गौरव
विधि	निषेध	लालसा	अनिच्छा
विपदा	सम्पदा	लेन	देन
विष	अमृत	सजीव	निर्जीव
विक्रय	क्रय	सत्	असत्
विजय	पराजय	सदाचार	दुराचार
विजेता	विजित	सन्धि	विग्रह
विधवा	सधवा	सफल	विफल
शकुन	अशकुन	सभ्य	असभ्य
शयन	जागरण	सम	विषम
शिक्षित	अशिक्षित	सम्मुख	विमुख
शान्त	अशान्त	सामान्य	विशेष
शुद्ध	अशुद्ध	स्तुति	निन्दा
शुभ	अशुभ	समष्टि	व्यष्टि
शुष्क	आर्द्र	सुलभ	दुर्लभ
संपत्	विपद्	सूक्ष्म	स्थूल
संयोग	वियोग	सृजन	नाश, संहार
संशय	निश्चय	सृष्टि	प्रलय
संदिग्ध	असंदिग्ध	सौभाग्य	दुर्भाग्य
श्वास	उच्छ्वास	स्थिर	अस्थिर
सकाम	निष्काम	संक्षेप	विस्तार
सज्जन	दुर्जन	संगठन	विघटन
सुकर	दुष्कर	‘अ’ या ‘अन्’ पूर्व विरुद्धार्थक	
सुबोध	दुर्बोध	चतुर	अचतुर
सुमति	कुमति	होनी	अनहोनी
सुरूप	कुरूप	न्याय	अन्याय
स्थावर	जंगम	कर्म	अकर्म
स्थिर	अस्थिर	आर्ष	अनार्ष
स्वर्ग	नरक	पवित्र	अपवित्र
स्वकीय	परकीय	पूर्ण	अपूर्ण
संदेह	असंदेह	लौकिक	अलौकिक

स्वकीया	*परकीया*	*फिट*	*अनफिट*
सार्थक	*निरर्थक*	*आर्य*	*अनार्य*
स्वतंत्र	*परतंत्र*	*प्रधान*	*अप्रधान*
स्वाधीन	*पराधीन*	*स्वीकृत*	*अस्वीकृत*
स्वार्थ	*परमार्थ*	*सत्य*	*असत्य*
हर्ष	*शोक*	*कृत्रिम*	*अकृत्रिम*
हरा	*सूखा*		
हास	*परिहास*		
हेय	*उपादेय*		
ह्रास	*विकास*		
स्वच्छ	*अस्वच्छ*		

साथ-साथ प्रयुक्त विलोम शब्द

हानि	*लाभ*	*न्याय*	*अन्याय*
सुख	*दुख*	*उत्थान*	*पतन*
जय	*पराजय*	*जड़*	*चेतन*
आय	*व्यय*	*नूतन*	*पुरातन*
आदान	*प्रदान*	*स्वर्ग*	*नरक*
जीवन	*मरण*	*धूप*	*छाया*
राग	*विराग*	*हित*	*अहित*
यश	*अपयश*	*संयोग*	*वियोग*
भद्र	*अभद्र*	*उदय*	*अस्त*
उचित	*अनुचित*	*सर्दी*	*गर्मी*
देव	*दानव*	*धर्म*	*अधर्म*
गुण	*दोष*	*ऊंच*	*नीच*
साक्षर	*निरक्षर*	*हँसना*	*रोना*
मंगल	*अमंगल*	*मान*	*अपमान*

अनेकार्थक शब्द

परमात्मा – ब्रह्मा, धर्म, विष्णु, तप।
अनन्त – आकाश, जिसका अन्त न हो।
अम्बर – वस्त्र, आकाश।
अन्तर – भेद, फर्क, मध्य, अवसर, अवधि, व्यवधान।
अंक – चिन्ह, नाटक का एक भाग, गोद, नम्बर, गिनती।
अज – परमेश्वर, दशरथ का पिता, बकरा।
अर्क – सूर्य, आक का पौधा।
अर्थ – धन, ऐश्वर्य, मतलब, प्रयोजन, हेतु, व्याख्या।
अपवाद – निन्दा, किसी नियम का विरोधी उदाहरण।
अरुण – सूर्य का सारथि, प्रभात का सूर्य, हल्का लाल रंग।

आराम – विश्राम, रोग दूर होना, शान्ति, बाग।
आम – एक फल, साधारण।
आलि – सखी पंक्ति।
उत्तर – उत्तर दिशा, जवाब, बाद वाला।
और –योजक शब्द, तथा, दूसरा, अधिक।
कनक – धतुरा, सोना, गेहूं।
कर – हाथ किरण, टैक्स, हाथी, सूंड, करने की आशा।
कर्ण – कान, कुन्ती का सबसे पहला पुत्र।
कल – बीता दिन, आने वाला दिन, चैन, मशीन, सुन्दर, मधुर।
कला – आर्ट, सोलहवां भाग, चन्द्रकिरण।
काम – कार्य, कामदेव, मतलब, प्रयोजन, लालसा, लाभ।
कुल – समस्त, सब वंश, खानदान
कृष्ण – काला, श्री कृष्ण
कोष – शब्दकोष, खजाना
ग्रहण – लेना, स्वीकार करना, सूर्य या चन्द्र का ग्रासन।
गिरा – वाणी, गिर पड़ा
गुण – स्वभाव, कौशल, रस्सी
गुरु – भारी, उपदेश देने वाला, पढ़ाने वाला, दो मात्राओं वाला अक्षर
गौ – गाय, भूमि (गोलोक), वाणी, इन्द्रिय
घट – शरीर, घड़ा, कम होना, हृदय
घन – सघन, बादल, हथौड़ा, दृढ़
चक्र – एक अस्त्र, षड्यन्त्र, पहिया
चपला – चंचल, स्त्री, बिजली, लक्ष्मी
छत्र – छतरी, राजछत्र, कुकुरमुत्ता
जड़ – जड़, मूल, अचेतन, मूर्ख
जलज – कमल, मोती, मछली, सेवार
जीवन – जिंदगी, जल
तनु – तन, पतला, कृश
तम – अँधेरा, पाप, तमोगुण, राहु
तात –प्रिय (पिता, मित्र, ज्येष्ठ भ्राता, लघु भ्राता सबके लिए 'तात' प्रयुक्त होता है।)
ताल – तालाब, गीत का स्वर, ताली बजाना, ताड़ का पेड़।
तारा – सत्यवादी महाराज हरिश्चन्द्र की पत्नी का नाम, सितारा, आँख की पुतली।
दण्ड – डण्डा, सजा, एक व्यायाम
दल – सेना, समूह, पत्रा, पंखडी, पक्ष
द्विज – पक्षी, ब्राह्मण, चन्द्रमा, द्विजन्मा
धातृ – धाय, माँ पृथ्वी
नग – रत्न, नगीना, पहाड़, वृक्ष, सूर्य

नव – नौ, नया
नाक – स्वर्ग, नासिका, सम्मान
नाग – साँप, हाथी, नागकेशर, मनुष्य की एक जाति
निदेश – आज्ञा निर्देश, कथा, अनुमति, उपदेश, पास
निशाचर – राक्षस, उल्लू
पतंग – गुड्डी, सूर्य, पक्षी, कीट-पतंग
पक्ष – पंख, बल आधार, पन्द्रह दिन का समय, एक विशेष दल की तरफ के लोग।
पत्र – चिट्ठी, पत्र, किसी धातु का पतरा
पद – पदवी, पैर, स्थान, भाग, छन्द का एक चरण, उपाधि गीत (जैसे – सूरदास के पद)।
पय – पानी, दूध
पयोधर – बादल, कुच (स्तन)
पंच – निर्णय करने वाला, गाँव की पंचायत का पंच, पाँच की संख्या
पृष्ठ – पीछे का भाग, पीठ, कापी या पुस्तक का पेज (सफा)
पानी – जल, लाज, क्षार, तेजस्विता
पूत – पवित्र, पुत्र
पूर्व – पहले, एक दिशा
पोत – पानी का जहाज, पक्षी का नन्हा बच्चा (शावक)
फल – परिणाम, खाने के फल, चाकू या तलवार का फलका
बल – ताकत, सेना, शक्ति, बलराज।
बलि – न्यौछावर, राजा बलि
बाल – बालक, केश, गेहूँ आदि की बालें।
भव – शिव, संसार, जन्य, हेतु, बादल, कामदेव
भुवन – संसार, त्रिलोक
भूत – प्रेत, बीता काल, पृथ्वी-जल-तेज-वायु-आकाश – ये पांच महाभूत हैं। इन्हें पंच तत्त्व भी कहते हैं।
मधु – मधुर, मीठा, शहद, मद, फूलों का रस, मधुमास, वसन्त, अमृत, एक राक्षस
मन्त्र – सलाह, वेद की ऋचा, मोहनमन्त्र, जादू-मन्त्र
मान – अभिमान, सम्मान, परिमाण, नक्षत्र के दिखाई देने का समय
मित्र – सखा, सूर्य
मोद – प्रसन्नता, कस्तूरी, सुगन्ध
रस – फल या पेड़-पौधों का रस, कविता का आनन्द, सार, स्वाद, जल, पेय, रुचि, पारा, भक्ति
रक्त – लाल रंग, खून
राग – रंग, प्रेम, मोह, संगीत का रंग, लाली
वन – जल, जंगल
वर – श्रेष्ठ, दूल्हा, सुन्दर
विग्रह – शरीर, लड़ाई-झगड़ा, युद्ध
वर्ण – अक्षर, हरा-पीला-नीला आदि रंग, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र – ये चार जातियां
वाम – बायां, उल्टा, स्त्री, बुरा, एक छन्द, कामदेव

वास – रहने का स्थान, रहना, कपड़ा, गन्ध
विधि –विधाता (ब्रह्मा), भाग्य, रीति (ढंग) कानून
ब्याज – छल, बहाना, सूद
शिखा – आग की लपट, चोटी, प्रकाश की किरण, नोक
सार – तत्त्व, फौलाद, खबर का निचोड़, सत
सारस – एक पक्षी, हंस, कमल
सारंग – हिरण, सांप, मोर, बादल, कमल, हंस, घोड़ा, भौरा, तालाब, एक राग का नाम
साल – वर्ष, घाव, शूल, एक वृक्ष
सूत – सारथि (रथ हाँकने वाला), कर्ण, धागा
स्व – निज, धन
हरि –विष्णु, कृष्ण, राम, परमेश्वर, सूर्य, घोड़ा, चन्द्र, यम, वायु, सर्प, मण्डूक, बन्दर, इन्द्र, शेर
हंस – आत्मा पक्षी की जाति गुरु।